बाल निर्माण की कहानियाँ

१



बाल निर्माण की कहानियाँ

(भाग-१)



लेखिका :
डॉ० आशा 'सरसिज



प्रकाशक :
युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट
गायत्री तपोभूमि, मथुरा
फोन (०५६५) २५३०१२८, २५३०३९९
मो० ०९९२७०८६२८७, ०९९२७०८६२८९
फैक्स नं० २५३०२००

पुनर्मुद्रित सन् २०१४ मूल्य : ११.०० रुपये

विषय-सूची



घोंसला

उमा के घर के पीछे एक बबूल का पेड़ था। उमा अपने कमरे की खिड़की से उसे देखती रहती थी। एक दिन उसने देखा कि एक चिड़िया बार-बार आ-जा रही है। वह अपनी चोंच में छोटे-बड़े तिनके लाती है, उन्हें वह पेड़ की डाल पर रखती जाती है। उमा ने देखा कि एक बड़ा सुंदर घोंसला बनना शुरू हो गया है। उसने अपनी माँ से पूछा—'माँ! यह चिड़िया कैसा सुंदर घोंसला बना रही है, पर हमारे घर में जो चिड़िया घोंसला बनाती है, वह तो इतना अच्छा नहीं होता। ऐसा क्यों है?'

माँ ने कहा—'बेटी! पेड़ पर तुम जो घोंसला देख रही हो, वह बया नाम की चिड़िया का है। बया घोंसला बनाने के लिए बड़ी प्रसिद्ध है। इसके घोंसले बड़े ही सुंदर होते हैं। इसका कारण यह है कि यह जी-जान से अपने काम में जुटी रहती है। यह अपने काम को पूरी मेहनत और लगन के साथ करती है, इससे इसका काम अच्छा होता है।'

यह कहकर माँ तो रसोई में खाना बनाने चली गई। अब उमा को शरारत सूझी। उसने खिड़की में से एक डंडा डाला। डंडे से धीरे-धीरे हिलाकर घोंसला गिरा दिया। इतने में दाना चुगकर चिड़िया वापस आई, उसने देखा कि घोंसला टूटा पड़ा है। कुछ तिनके बिखर गए हैं, कुछ हवा में उड़ गए हैं। अपनी मेहनत यों बेकार

होती देख बया को बड़ा दुःख हुआ। वह थोड़ी देर तक चीं-चीं करके रोती रही। फिर सोचा कि रोने से क्या होता है। रोते रहने से तो कोई काम पूरा हो नहीं सकता। इससे अच्छा तो यही है कि मैं दुबारा से ही घोंसला बनाना शुरू करूँ। अतएव वह फिर अपने काम में जुट गई।

दूसरे दिन बया जब खाना खाने गई तो उमा ने फिर उसका घोंसला गिरा डाला। उसने यह न सोचा कि इससे उसे कितनी परेशानी और दुःख होगा। दो दिन तक यह होता रहा। बया घोंसला बनाती और उसके जरा हटने पर उमा उसे तोड़ डालती। एक दिन जब उमा घोंसला गिरा रही थी, तो उसकी माँ ने उसे देख लिया। उन्होंने कहा—'उमा तुम यह क्या कर रही हो? किसी को सताते नहीं हैं, किसी के काम को बिगाड़ते नहीं हैं? बया चिड़िया है तो क्या तुम्हारे इस काम से उसे बड़ी कठिनाई होती है। तुम्हें उसकी सहायता करनी चाहिए, उसे तंग नहीं करना चाहिए। मनुष्य हो या पशु-पक्षी, किसी को परेशान नहीं करते।

पर माँ की बात का भी उमा पर कोई असर नहीं हुआ। जैसे ही वह कमरे से बाहर जाती तो वह डंडा उठाकर घोंसला गिराने लगती। पर बया थी कि बार-बार घोंसला बनाए जाती थी। वह सोचती थी, कभी तो उसकी मेहनत सफल होगी।

माँ ने देखा उमा गलत काम करती जाती है। वह उनकी बात नहीं मानती। उन्होंने एक उपाय सोचा। माँ ने उमा के सामने उसकी गुड़िया तोड़ डाली। उस गुड़िया को उमा बहुत प्यार करती थी। प्यारी गुड़िया के दो टुकड़े देखकर वह बड़ी दुखी हुई। वह फूट-फूटकर रोने लगी।

माँ ने कहा—'मैं तुम्हारी गुड़िया जोड़ दूँगी। पर तब जब कि तुम भी बया का घोंसला बनाकर आओगी। अब तक तो उसका पूरा घोंसला बन जाता। तुमने उसकी मेहनत बेकार कर दी।

माँ की बात सुनकर उमा दौड़कर कमरे से निकली। उसने अपने घर के बगीचे से तिनके और टूटी घास बीनी। वह पिछवाड़े से निकल कर जल्दी से पेड़ के पास पहुँची। वह सोच रही थी कि मैं अभी मिनटों में घोंसला बनाकर तैयार किए देती हूँ। वह डाल पर तिनके रखती, घास से उन्हें लपेटती जाती, पर तिनके थे कि डाल पर टिकते ही न थे। वह बार-बार कोशिश करती, पर सब बेकार जाती। अंत में वह खीझकर पेड़ के नीचे बैठकर रोने लगी। जिसे वह छोटा सा काम समझ रही थी, वह तो बड़ा कठिन काम निकला। थोड़ी देर बाद उसे लगा कि कोई उसके सिर पर हाथ फिरा रहा है। उमा ने पीछे मुड़कर देखा तो माँ सामने खड़ी थी। वे कह रही थीं—'कोई काम बिगाड़ना तो सरल है, पर बनाना कठिन होता है। यदि कर सकती हो तो दूसरों की सहायता करो। किसी को न तो सताओ और न उसका काम बिगाड़ो।' उमा को लगा कि माँ की बात न मानकर उसने कितनी बड़ी भूल की है। अब वह सदैव उनकी हर आज्ञा मानेगी।



भेड़िया और बकरी

एक बार की बात है। कालू भेड़िया अपने घर जा रहा था। वह शेर से लड़कर आ रहा था, इसलिए गुस्से में भरा था। चलते-चलते अँधेरा भी हो गया। रास्ते में एक जगह कुँआ पड़ता था। पर गुस्से में

होने के कारण भेड़िये को ध्यान ही नहीं रहा। गुस्से में बहुत से गलत काम हो जाते हैं, बहुत हानि हो जाती है। कालू को भी कुएँ का ध्यान नहीं रहा। उसका पैर कुंए के ऊपर पड़ गया, कालू कुएँ में गिर गया।

कुएँ में पानी अधिक नहीं था। जैसे-तैसे कालू ने वहाँ रात बिताई। सुबह से ही उसने चिल्लाना शुरू कर दिया—'कोई मुझे कुएँ से निकाल लो।' पर किसी ने उसे कुएँ से निकाला नहीं। ऐसी बात नहीं थी कि वहाँ कोई आया नहीं था। शेर, गीदड़, लोमड़ी, हाथी, ऊँट सभी उस जगह से गए थे। सभी ने कालू भेड़िये की आवाज सुनी थी, पर सभी यह कहते हुए चले गए थे कि तुम तो सभी से लड़ते-झगड़ते रहते हो। तुम कभी किसी की सहायता नहीं करते। फिर हम ही तुम्हें क्यों निकालें? उन्हें डर भी था कि यदि वे भेड़िये को निकालेंगे तो वह उन्हें काट खाएगा।

कालू बड़ी देर तक कुएँ में पड़ा-पड़ा रोता-चिल्लाता रहा। रंजू बकरी ने पूछा—'तुम कौन हो, कहाँ से बोल रहे हो?'

कालू चिल्लाया—'दीदी! मैं कुएँ में हूँ। मुझे तुरंत निकालो, नहीं तो मैं मर जाऊँगा।

रंजू को दया आ गई। वह दौड़ी-दौड़ी अपने घर गई। वहाँ से एक मोटी रस्सी लाई। रंजू ने रस्सी का एक सिरा पकड़ा और एकक कुएँ में लटका दिया। फिर बोली—'कालू भैया! तुम जल्दी से रस्सी का सिरा पकड़कर ऊपर आ जाओ। मैं दूसरा सिरा पकड़े वहाँ खड़ी हूँ।'

भेड़िया रस्सी पकड़कर धीरे-धीरे ऊपर तक आया, पर यह क्या? कालू भेड़िये का हलका सा धक्का लगा, रंजू सँभल न पाई,

वह कुएँ में गिर पड़ी। वह कुएँ के अंदर से चिल्लाई—'कालू भैया! जल्दी निकालो, नहीं तो मैं डूब जाऊँगी।

पर कालू बड़ा स्वार्थी था। अपनी जान बचाने वाली बकरी की भी परवाह न की। उसने बहाना बनाया—'रात भर कुएँ में रहने से मेरे हाथ जकड़ गए हैं। मैं तुम्हें निकाल नहीं सकता।' कालू सोच रहा था कि बकरी मरे तो मर जाए। अब मुझे क्या पड़ी, मैं तो बच ही गया।

बकरी कालू की चालाकी समझ गई। वह बोली—'दुष्ट कालू! सब ठीक ही कहते हैं कि तू बड़ा स्वार्थी है। तुझे बचाने के कारण मैं कुएँ में गिरी, पर तुझे मेरी जरा भी परवाह नहीं। तू न बचाए, तो न सही। मुझे बचाने वाले बहुत आ जाएँगे। मैं तो दूध देती हूँ, सभी को दूध पिलाती हूँ, सभी का उपकार करती हूँ, तू नीच है जो किसी के काम नहीं आता। सबको हानि पहुँचाता है, इसलिए किसी ने भी तेरी सहायता नहीं की।

कालू तो चला गया। थोड़ी देर बाद एक आदमी उधर से निकला, उसने बकरी के मिमियाने की आवाज सुनी। आदमी ने पूछा—'तू कहाँ से बोल रही है?'

'मैं यहाँ कुएँ में हूँ। बकरी बोली।

आदमी ने सोचा कि यह तो बड़े काम की है। इसे देखकर बच्चे खुश होंगे, यह दूध देगी। उसने जल्दी से उस बकरी को कुएँ से निकाल लिया।

बकरी बोली—'काका! तुम्हारी कृतज्ञ हूँ, तुमने मेरी जान बचाई, है। आदमी ने पूछा कि वह कुएँ में कैसे गिरी थी? बकरी ने सारी घटना बता दी।

आदमी बोला—'तू तो बहुत अच्छी है। चल मेरे साथ घर चल। वह बकरी को अपने घर ले गया। वहाँ बकरी उसके बच्चों के साथ खेलती रहती, खूब खाती-पीती और खूब दूध देती थी।

जो भेड़िये की तरह दूसरों को हानि पहुँचाता है, किसी की सहायता नहीं करता, उसे कोई नहीं चाहता। जो बकरी की तरह दूसरों के काम आता है, अच्छे काम करता है, वह सुखी रहता है।



हठ का फल

एक घना जंगल था। उसमें एक पुराना तालाब बना हुआ था। वह तालाब गहरा भी था। तालाब के किनारे जलमुर्गियाँ और उनके बच्चे घूमते रहते थे। वे कभी पानी में तैरते थे। कभी पंखों से एक-दूसरे पर पानी उछालते थे। कभी एकदूसरे से आगे बढ़ने की कोशिश करते।

तालाब के किनारे पर एक चिंटू नाम के चूहे का बिल था। चिंटू के दो-तीन छोटे-छोटे बच्चे थे। जब चिंटू उनके लिए खाना जुटाने बिल से बाहर निकल जाता था तो बच्चे भी बिल से बाहर निकल आते थे। वे तीनों तालाब के किनारे पर आकर बैठ जाते थे। वहाँ वे देखते कि पानी में जलमुर्गावी और उनके बच्चे तैर रहे हैं। उन्हें पानी में खेलते हुए देखकर चूहे के उन तीनों बच्चों का मन ललचा जाता था। उनका मन करता था कि वे भी तैरें। पर वहाँ एक बड़ी सी जल मुर्गावी थी। वह उन्हें पानी में नहीं आने देती थी।

शाम को चूहे के बच्चे घर लौटे। चिंटू के साथ बैठकर सबने खाना खाया। चिंटू के बड़े बच्चे का नाम था—मिंटू। वह बोला—मुर्गावी काकी बड़ी खराब है।'

'क्यों क्या बात है बेटा? उन्होंने क्या किया?' चिंटू ने पूछा।

पिताजी वह खुद तो सारे दिन पानी में खेलती रहती हैं। उनके बच्चे भी पानी में तैरते रहते हैं, उन्हें तो वह मना नहीं करती। हम किनारे पर बैठे-बैठे उनका खेल देखते रहते हैं। हमारा मन करता है कि हम भी उनके साथ खेलें, पर मुर्गावी काकी ने मना कर दिया। उन्होंने हमें तालाब में पैर तक भी नहीं रखने दिया।'

मिंटू की बात सुनकर चिंटू चूहे ने उसे समझाया कि बेटा, मुर्गावी काकी तुम्हारी भलाई की बात कहती हैं। हम पानी में तैर नहीं सकते। पानी में जाएँगे तो डूब जाएँगे। तुम अभी छोटे हो, ना समझ हो। तुम्हें बड़ों का कहना मानना चाहिए।

दूसरे दिन जब चिंटू बिल से बाहर चला गया तो उसके दोनों बच्चे भी बाहर निकले। इधर-उधर घूमकर वे तालाब के किनारे आकर बैठ गए। बड़ी देर तक वे मुर्गावी के बच्चों का खेल देखते रहे। कुछ देर बाद बड़ी मुर्गावी खाना खाने चली गई। मिंटू ने सोचा कि अब तो हमें कोई रोकने वाला है नहीं, क्यों न हम आज पानी में तैरें? वह अपने छोटे भाइयों से बोला—'नीतू चलो आज हम भी तैरेंगे।'

प्रीतू बोला—'भैया पिताजी ने मना किया था न।'

मिंटू बोला—'पिताजी को हम बताएँगे ही नहीं। तुझे पानी में खेलना है तो जल्दी चल।'

प्रीतू की बात बिना सुने ही मिंटू तालाब में तेजी से उतर गया।

उसके पीछे-पीछे धीरे-धीरे नीतू-प्रीतू भी आगे बढ़े। वे अभी पानी में उतरने की सोच ही रहे थे कि एक आवाज सुनाई दी। कोई जोर से कह रहा था—'बचाओ-बचाओ।' उन्होंने ध्यान से सुना तो पता चला कि वह आवाज उनके बड़े भैया मिंटू की ही है। बात यह हुई कि तालाब था गहरा, मिंटू जैसे ही उसमें उतरा तो डूबने लगा। अब वही सहायता के लिए जोर-जोर से चिल्ला रहा था। उसकी आवाज सुनकर दूसरे किनारे पर तैर रहे मुर्गावी के बच्चे भी दौड़े आए। उन्होंने गोता लगाकर मिंटू को निकालने की बहुत कोशिशें कीं, पर सब बेकार गईं। तालाब गहरा था, मिंटू का कुछ पता नहीं लग पा रहा था। नीतू-प्रीतू ने भी तालाब में उतरने की कोशिश की, पर मुर्गावी के बच्चों ने रोक दिया। वे बोले कि यदि तुम उतरोगे तो तुम भी डूब जाओगे। विवश होकर दोनों तालाब के किनारे बैठकर रोने लगे। थोड़ी देर में मुर्गावियाँ घर से लौटकर आईं। नीतू-प्रीतू ने उन्हें रोते-रोते सारी बात बताई।

मुर्गावी काकी बात समझ गई। तभी उसने अपने बच्चों के पास डूबते-बहते मिंटू को देखा। काकी ने झपटकर अपनी चोंच से उसकी पूँछ पकड़ ली। उसने मिंटू को किनारे पर धूप में लिटा दिया। नीतू-प्रीतू भी सहमे से उसके पास बैठ गए। शाम तक मिंटू में चलने-फिरने की हिम्मत न आ सकी। चिंटू चूहा तीनों बच्चों को घर में न पाकर ढूँढ़ता हुआ तालाब के किनारे आया। सारी बात जानकर वह मिंटू को उठाकर घर ले गया। भीगने से मिंटू को बुखार भी आ गया था। कई दिन तक उसने शीलू लोमड़ी की कड़वी दवा खाई, भूखा-प्यासा रहा। तब कहीं जाकर मिंटू ठीक हुआ। उसने और नीतू-प्रीतू ने सोच लिया कि अब हम सदैव बड़ों की आज्ञा मानकर काम करेंगे। 

मनमानी करने वाला

एक चींटी थी। उसका नाम था—शीलू। उसने रामू के रसोईघर में अपना घर बना लिया था। रामू की माँ बड़ी अच्छी-अच्छी चीजें बनाती थीं। रामू को मिठाई बहुत पसंद थी। कभी वह माँ से गुलाब जामुन बनवाता, कभी हलवा बनवाता था। शीलू चुपचाप जाती और मुँह में थोड़ी सी चीज दबाकर अपने बिल में घुस जाती। बिल में उसका एक छोटा सा बच्चा भी रहता था। शीलू उसी के लिए वे सारी चीजें ले जाया करती थी।

चींटी का बच्चा कभी-कभी बड़ी शरारत करता था। उसने अभी नया-नया चलना सीखा था, जहाँ भी मन आता था वहीं जाने लगता था। शीलू उसकी इस बात से बड़ी परेशान थी। वह उसे हर जगह जाने के लिए टोकती रहती थी।

एक दिन चींटी के बच्चे ने देखा कि रसोईघर में आग जल रही है। वह खूब चमक रही थी, चींटी के बच्चे को वह बड़ी ही अच्छी लगी। वह सोचने लगा कि इसे पास जाकर देखना चाहिए। उसने शीलू से कहा—'अम्मा! देखो यह आग कितनी चमक रही है? चलो इसके पास चलकर देखें।'

चींटी बोली—'नन्हें! हम इसके पास नहीं जा सकते। जरा भी इससे छू जाएँगे तो दोनों ही जल जाएँगे। तुम कभी इसके पास नहीं जाना। आग को तो दूर से ही देखा करो।'

चींटी का बच्चा उस समय तो चुप रह गया, पर जब शीलू उसके लिए खाना लेने चली गई तो वह सोचने लगा—'माँ तो बेकार में ही इतना डराती हैं। मुझे छोटा समझती हैं, इसलिए घूमने

नहीं देतीं। आज तो मैं घूमने ही जाऊँगा और सबसे पहले जाकर इस चमकती आग को ही देखूँगा।'

वह घर से बड़ी शान से निकला। इधर-उधर घूम-फिरकर चमचमाती आग को देखता रहा। फिर उसका मन हुआ कि वह आग को छूकर देखे। धीरे से उसने आग को छुआ। फिर क्या था? उसका पैर तुरंत झुलस गया। चींटी का बच्चा लँगड़ाते हुए बड़ी कठिनाई से घर वापस आ गया। शाम को चींटी लौटकर आई। उसने दवा लगाई, पट्टी बाँधी। बहुत दिनों तक इलाज भी कराया, पर उसे कोई फायदा नहीं हुआ। चींटी का बच्चा अब भी लँगड़ाकर कर चलता है। उसके दोस्त उसे 'लँगड़े मियाँ' कहकर चिढ़ाते हैं। उसे अपने पैर को देखकर दु:ख होता है कि वह माँ का कहना मानता तो लँगड़ा न बनता।



एकता का फल

एक जंगल था। उसमें बरगद का एक बड़ा पेड़ था। पेड़ पर एक गिलहरी और एक मैना रहती थी। पेड़ की तलहटी में एक मुर्गी का घर था। गिलहरी, मैना और मुर्गी तीनों में धीरे-धीरे बड़ी दोस्ती हो गई। उन्होंने सोचा मिल-जुलकर रहना चाहिए। मिलकर सभी को काम करना चाहिए।

एक दिन गिलहरी बोली—'मैना दीदी! हम तीनों अलग-अलग खाना बनाते हैं। इसमें समय ज्यादा लगता है। क्यों न एक साथ ही सबका खाना बना लिया करें?'

मैना बोली—'और कपड़े भी सब अलग-अलग धोते हैं, उसमें भी समय अधिक लगता है।'

मुर्गी ने कहा—'सभी को अपने बगीचों की अलग-अलग रखवाली करनी पड़ती है। कभी-कभी तो हम तीनों ही रातभर जागती हैं। उससे भी क्या लाभ है?'

तीनों ने मिलकर तय किया कि गिलहरी खाना बनाएगी। मैना सबके कपड़े धोएगी। मुर्गी बगीचों की रखवाली करेगी।

गिलहरी ने रसोई का सारा काम सँभाल लिया। वह बड़ी फुरती से जाती, तरह-तरह की सब्जी तोड़कर लाती और फल लाती। फूली हुई गोल-गोल चपाती बनाती।

मैना सभी के कपड़ों की गठरी बाँध लेती। वह उसे पंजों में दबाकर नदी के किनारे ले जाती। साबुन लगाकर कपड़े रगड़ती। चोंच में कपड़ा दबाकर नदी में धो लाती।

मुर्गी रानी बगीचे में पानी लगाती, निराई-गुड़ाई करती। बगीचे में तरह-तरह के फल-फूल बोती। कुछ ही दिनों में बगीचा फूलों से भर गया। तरह-तरह की सब्जियाँ और फल भी खूब उगने लगे।

अब गिलहरी, मैना और मुर्गी के पास समय भी बचता था। कम मेहनत में उनका अच्छे से अच्छा काम हो जाता था। इससे उनकी शक्ति की भी बचत होती थी। शेष बचे समय में तीनों ही सहेलियाँ पेड़ के तले बैठकर गप-शप करती रहती थीं।

एक दिन तीनों बैठी-बैठी मूँगफलियाँ खा रही थीं। खाते-पीते गिलहरी बोली—'दीदी! हम बहुत समय तक खाली बैठी रहती हैं। इस तरह खाली बैठने से क्या लाभ? हर समय कुछ न कुछ करते रहना चाहिए।

मैना बोली—'हाँ दीदी! अपना काम तो सभी करते हैं। महान वही है जो दूसरों की भलाई का काम करते हैं।

तीनों ने सोचा कि पेड़ के नीचे एक स्कूल खोला जाए। कलिया कोयल कूहुक-कूहुक कर सबको वह बात सुना आई। दूसरे ही दिन से चींटी, कोयल, चिड़िया आदि के बहुत से बच्चे पढ़ने आने लगे। मैना, गिलहरी और मुर्गी जल्दी-जल्दी अपना काम कर लेतीं। दोपहर में वे बच्चों को पढ़ाया करतीं। धीरे-धीरे कोयल, चींटी और चिड़िया सभी के बच्चे बड़े होशियार हो गए। उनके इस काम से आज भी जंगल के पक्षी गिलहरी, मैना और मुर्गी की प्रशंसा करते रहते हैं। सच है जो अपना काम मिल-जुलकर करते हैं, वे सुखी रहते हैं और दूसरों से प्रशंसा भी पाते हैं।



बुराई करने वाला तोता

एक संत थे। उनका पालतू तोता था। तोता बड़ा ही विचित्र था। वह मनुष्यों की भाषा में बात करता था। उसकी एक और विशेषता थी कि तोता सबके मन की बात जान लेता था। यही नहीं, वह सबके विषय में सही बातें भी बता देता था।

धीरे-धीरे तोते की प्रसिद्धि बढ़ती गई। संत के पास अनेकों आदमियों की भीड़ लगी रहती थी। सभी तोते से अपने भविष्य के संबंध में अनेक प्रश्न करते। धीरे-धीरे तोते को घमंड होने लगा। वह सोचने लगा कि मैं ही सबसे बड़ा विद्वान हूँ। घमंड का फल यह हुआ कि उसे सभी आदमी अपने से नीचे दीखने

लगे। अब वह दूसरों के गुण कम, दोष अधिक देखने लगा। उसे सबमें बुराइयाँ ही बुराइयाँ दिखलाई देती थीं।

एक बार किसी राजा ने संत को बुलाया। संत अपने साथ अपना तोता भी ले गए। जब वे चलने लगे तो राजा को अपने तोते का भी परिचय कराया। उसकी विशेषताएँ बताईं। सभी को यह जानकर अचंभा हुआ कि तोता सभी प्रश्नों का उत्तर दे देता है, सभी के बारे में ठीक-ठीक बताता है। राजा ने सबसे पहले अपने बारे में पूछा। तोता बोला—राजन! आप अपनी रानी से लड़ते रहते हैं। राजा चुप हो गए। फिर उन्होंने अपने दरबारियों के विषय में पूछा। एक-एक के बारे में तोते से बताने को कहा। तोते का तो स्वभाव बन गया था दूसरों की बुराई देखने का। किसी को राजा की बुराई करने वाला बताया। किसी को प्रजा को सताने वाला। किसी को धन चुराने वाला।

राजा ने तोते की बात का विश्वास कर लिया। उन्हें बड़ा गुस्सा आया कि उनके मंत्री अच्छे नहीं हैं। राजा अपने सेनापति आदि के विषय में तोते से जानना चाहता था, पर उस समय रात होने को थी। दरबार खतम होने का समय था। राजा ने संत से यह विनती की कि वे आज की रात में उनके अतिथि बनें। संत खुशी-खुशी रुक गए।

रात में जब संत सोने चले गए तो सभी मंत्रियों ने आपस में सलाह की। उन्होंने सोचा कि चुपके से इस तोते को मरवा देना चाहिए। यह तो जब से आया है हमारी बुराई ही कर रहा है। यह हम सबको राज्य से निकलवा देगा। प्रधानमंत्री ने एक सेवक को

संत के कमरे में भेजा। वे गहरी नींद में सोए थे। नौकर ने चुपके से जाकर तोते को मार दिया।

जब संत सुबह उठे तो उन्होंने तोते को मरा हुआ पाया। यह देखकर वह दुखी हुए। फिर उन्होंने सोचा कि तोते को क्यों मारा गया? उनकी समझ में आ गया कि तोते में सबके दोष देखने की ही आदत थी। कल रात को भी उसने सबकी बुराई की थी। जो दूसरों की बुराई करता है, उसे कोई नहीं चाहता। इसी कारण उसे मरवा दिया गया। दूसरों की निंदा करने वाला सबसे घृणा और तिरस्कार ही पाता है।



आज्ञाकारी बालक

शीला नाम की एक बकरी थी। उसके दो प्यारे-प्यारे बच्चे थे। शीला उनका बड़ा ध्यान रखती थी। खूब दूध पिलाती थी, हरी-हरी घास खिलाती थी। कुछ ही दिनों में दोनों बच्चे गोल-मोल, मोटे-ताजे हो गए। शीला ने उनके पैरों में घुँघरू बाँध दिए थे। दोनों छम-छम करके घर में कभी इधर घूमते तो कभी उधर।

जो भी उन बच्चों को देखता, उसका जी खुश हो जाता। दोनों बड़े शिष्ट और आज्ञाकारी थे। जो भी उनके घर आता था उससे नमस्ते करते थे। सभी से विनम्रतापूर्वक बातें करते थे।

एक दिन शीला के घर भालू दादा आए। वह पास के एक स्कूल के प्रधानाचार्य थे। जंगल के जानवरों के इतने बच्चे उनके स्कूल में आते थे कि वह खचाखच भरा रहता था। भालू दादा ने

बकरी के बच्चों चिंटू और पिंटू को देखा। उनकी शिष्टता से वे बहुत प्रभावित हुए। उन्होंने सोचा कि इन बच्चों को अच्छी शिक्षा मिलनी ही चाहिए। इससे यह बड़े होकर महान बनेंगे।

उन्होंने बकरी से कहा—'दीदी! तुम इन बच्चों को स्कूल में दाखिल क्यों नहीं करा देतीं।

तुम जानते ही हो भैया! इनके पिता तो हैं नहीं। खाने-पीने का इंतजाम भी मुझे ही करना पड़ता है। मैं सुबह ही जाती हूँ और दिन छिपे घर वापस आती हूँ। मेरे पास इतना समय नहीं है कि इन्हें स्कूल छोड़ने जाऊँ और फिर समय से लेने भी आऊँ।' बकरी भालू दादा से कहने लगी।

'पर ये तुम्हारे बच्चे तो बड़े समझदार हैं, अकेले ही आ-जा सकते हैं।' भालू कहने लगा।

'भैया! कालू भेड़िया बिना किसी बात के मुझसे दुश्मनी बाँधे बैठा है। वह इन बच्चों को भी खाने की ताक में है।' रुँधे हुए कंठ से बकरी बोली।

'अम्मा! हम कभी भेड़िये की बातों में नहीं आएँगे। घर से सीधे स्कूल और स्कूल से सीधे घर ही आएँगे। कृपया हमें स्कूल जाने की आज्ञा दे दो।' चिंटू-पिंटू दोनों एक साथ बोले।

भालू दादा भी कहने लगे कि बच्चों को घर बैठाने से क्या लाभ? घर में तो ये बेकार के काम करते हैं। स्कूल जाकर पढ़ेंगे तो नई चीजें सीखेंगे। समय का सदुपयोग होगा। ये बहुत अच्छे बच्चे बनेंगे। भालू दादा ने ये भी कहा कि स्कूल की माई लोमड़ी बच्चों को ले जाया करेगी और घर छोड़ जाया करेगी। इस बात पर शीला बच्चों को पढ़ाने के लिए तैयार हो गई। दूसरे दिन वह उन्हें स्कूल में दाखिल करा आई।

शीला ने बच्चों को अच्छी तरह से समझा दिया था कि वे स्कूल से सीधे घर आएँ। इसी प्रकार घर से सीधे स्कूल ही जाएँ। इधर-उधर कहीं न जाएँ, रास्ते में कोई कुछ चीज दे तो कभी न लें।

कोई कहीं चलने को कहे तो मना कर दें। उसने बच्चों को बताया कि कालू भेड़िया आदि बच्चों को मिठाई आदि देकर बहकाते हैं। फिर बहकाकर अपने घर ले जाते हैं। वहाँ वे उन्हें मारकर खा जाते हैं। चिंटू-पिंटू दोनों ने माँ को विश्वास दिलाया कि वे कभी किसी की बातों में नहीं आएँगे।

कालू भेड़िये को पता लगा कि चिंटू-पिंटू पढ़ने जाते हैं। उसने सोचा किसी प्रकार दोनों को पकड़ना चाहिए।

एक दिन कालू एक थैले में रस भरी गरम-गरम जलेबियाँ भर लाया। पेड़ के नीचे बैठकर चिंटू-पिंटू का इंतजार करने लगा। कुछ देर बाद उसने देखा कि दोनों बच्चे हाथ में बस्ता लटकाए लोमड़ी माई के साथ चले आ रहे हैं। कालू बढ़कर बोला—'लो बच्चो! गरम-गरम जलेबियाँ खाओ।'

चिंटू को सहसा माँ की सीख याद आ गई। उसने जलेबी लेने से मना कर दिया। कालू ने बार-बार कहा—'थोड़ी सी चख तो लो।' पर चिंटू बार-बार मना करता रहा। हारकर कालू को वापस जाना पड़ा।

पिंटू छोटा था। जलेबी देखकर उसका मन ललचा गया। भालू के जाने बाद वह बोला—"भैया! वह इतना अधिक कह रहा था। थोड़ी सी जलेबियाँ चख लेने में हानि ही क्या थी?'

'नहीं पिंटू! माँ ने मना किया था न! माँ की बात तो हमें माननी ही चाहिए।' चिंटू समझाने लगा।

घर पहुँचकर चिंटू ने सारी बातें माँ को बतलाईं। शीला ने उसकी पीठ थपथपाते हुए कहा कि तुमने बहुत अच्छा किया। बच्चों को पकड़ने वाले खाने-पीने की चीजों में बेहोशी की दवा मिला देते हैं। फिर बच्चों की गठरी बाँधकर उन्हें ले जाते हैं।

कुछ दिनों बाद की बात है कि चिंटू-पिंटू चले जा रहे थे। एकाएक कालू भेड़िया उनके रास्ते में आया। उसके हाथ में बिस्कुट का डिब्बा था। वह कहने लगा—'लो बच्चो! यह तुम्हारी माँ ने स्कूल में खाने को भिजवाया है।'

'कौन हो तुम?' चिंटू ने भौंहें चढ़ाकर पूछा।

'अरे! मैं तुम्हारा मामा हूँ बच्चो! तुम मुझे जानते नहीं?' कालू कहने लगा।

'तुम हमारे मामा हो तो घर आना। माँ से मिलना तभी हम यह लेंगे।' कहते हुए चिंटू आगे बढ़ गया।

माई लोमड़ी ने कहा—'ले लो बेटा! मामा से मना क्यों करते हो?' पर पिंटू-चिंटू दोनों ही ने बिस्कुट लेने से साफ मना कर दिया। वे स्कूल की ओर बढ़ गए।

बच्चों को फुसलाने की कालू की सारी कोशिशें बेकार गईं। अब तो पिंटू और चिंटू बड़े भी हो गए हैं। कालू भेड़िया जब भी उन्हें देखता है तो लाचार होकर अपने होठों पर जीभ फिराकर ही रह जाता है।

माँ की आज्ञा पालन करने से पिंटू-चिंटू दोनों ही भेड़िये का शिकार नहीं बने। अब भी वे अपनी माँ की हर बात को मानते हैं। यही कारण है कि वे बड़े गुणवान बन गए हैं। सभी उनकी बहुत ही प्रशंसा करते हैं। 

केसरी की नादानी

वाराणसी में गंगा के किनारे एक घना जंगल है। बहुत समय पहले की बात है। उस जंगल में एक सिंह राज्य करता था। उसका नाम था--केसरी।

केसरी की प्रजा उसे बहुत चाहती थी। था भी ठीक, क्योंकि केसरी प्रजा का बहुत ध्यान रखता था। उसके दुःख-दरद में साथ देता था। सभी की सहायता करता था। उसके राज्य में कोई भूखा नहीं रहता था और न ही किसी को कोई अभाव था।

पर केसरी में एक बहुत बड़ा दोष था। वह था स्वार्थी। यदि कोई वस्तु उसे पंसद आती थी तो उसे वह दूसरों को बिलकुल नहीं देखता था। उसकी यह बात भालू, रीछ, वानर, लोमड़ी आदि किसी भी जानवर को अच्छी नहीं लगती थी, पर कहता कोई प्राणी कुछ भी नहीं था। क्योंकि वह बड़ा था, राजा था। उससे सभी डरते थे, कहते भी तो कैसे?

एक दिन की बात है। केसरी घूमने निकला। उसके साथ था उसका मंत्री-भालू। उसका नाम था-भास्कर।

भास्कर और केसरी घूमते-घूमते गंगा नदी के किनारे पहुँचे। वहाँ भास्कर ने नाव में बिठाकर महाराज केसरी को सैर कराई। अचानक केसरी का ध्यान गया कि गंगा का पानी बह-बहकर पूर्व दिशा की तरफ जा रहा है।

केसरी के राज्य की सीमा तो वहाँ समाप्त हो जाती थी। पर उसने देखा कि पानी बहकर उसके राज्य से बाहर जा रहा है। उसने अपने मंत्री भालू से पूछा—'भास्कर! यहाँ से यह पानी किधर जाता है?

मुगलसराय की ओर महाराज।' पतवार से नाव आगे बढ़ाते भालू मंत्री ने उत्तर दिया।

'मुगलसराय में नदी के पास जंगल में भी एक शेर रहता था। उससे केसरी बड़ा चिढ़ता था। केसरी को बहुत बुरा लगा कि उसके राज्य से पानी वहाँ जाए। वहाँ का राजा उस पानी को अपने काम में लाए।

केसरी ने बिना सोचे-समझे भालू को आज्ञा दी—'मंत्री जी! इस पानी को दूसरे राज्य वाले जंगल में जाने से रोक दो। कल सुबह तक यहाँ बाँध बन जाना चाहिए।'

मंत्री था बड़ा बुद्धिमान। यह सुनते ही उसका माथा ठनका। वह जानता था कि गंगा में पानी बहुत है। यदि बाँध बनाया जाएगा तो उनके जंगल में बाढ़ आ जाएगी। उसने बड़ी विनम्रतापूर्वक सिंह से कहा—'महाराज! कहीं ऐसा न हो कि वह बाँध बनाने से हमें ही नुकसान हो?'

'तुमसे जो कहा जा रहा है, वह करो।' नथुने फुलाता हुआ शेर बोला।

भालू करता भी क्या? वह चुपचाप बैठा रहा।

नदी से वापस आकर भालू ने तुरंत सेनापति वानरदेव को बुलाया। उसे राजा का आदेश पूरा करने को कहा।

वानरदेव ने तुरंत सेना के कुशल इंजीनियरों को बुलाया। उन्हें शाम तक बाँध बनाने की आज्ञा दी।

इंजीनियरों ने जल्दी से पत्थर, ईंट और सीमेंट जुटाए फिर बाँध बनाना शुरू किया। शाम तक मजबूत और सुंदर बाँध बनकर तैयार हो गया।

दूसरे दिन केसरी सूरज निकलने पर भी सोता रहा। पर जैसे ही उसकी आँख खुली, वह भौंचक्का रह गया। यह क्या उसकी सारी गुफा में घुटने तक पानी भरा था। बड़ी मुश्किल से पार करके केसरी गुफा के बाहर तक आया। उनकी समझ में नहीं आ रहा था कि इतना पानी कहाँ से आ गया? वह अभी सोकर उठा और आँखें मल रहा था।

उसने देखा कि दूर से भालू मंत्री बड़ी तेजी से नाव खेते हुए वहीं आ रहा है। नाव को पास लाते हुए भालू बोला—'जल्दी कीजिए महाराज! जल्दी से नाव में बैठिए। पानी लगातार बढ़ता ही जा रहा है।'

शेर उछलकर तुरंत नाव में जा बैठा। तब कहीं जाकर उसने चैन की साँस ली। फिर भालू से पूछा—'इतना सारा पानी कहाँ से, कैसे आया?'

'बाँध बनने से सारे जंगल में बाढ़ आ रही है। सभी जानवरों के घरों में पानी भर गया है। सेना सभी को निकाल-निकालकर ऊँचे पेड़ों पर बैठा रही है।' मंत्री ने उत्तर दिया।

यह सुनकर शेर अपनी मूर्खता पर पछताने लगा। वह सोचने लगा कि पहले ही मंत्री की बात मान लेता तो ऐसी परेशानी कभी न आती।

उसने तुरंत सेनापति को बुलाया और तुरंत बाँध तोड़ने की आज्ञा दी। सैकड़ों वानर इस काम में जुट गए। कुछ ही समय में बाँध टूटकर गिर पड़ा। जंगल में आई बाढ़ दूर हो गई।

तब सिंह ने चैन की साँस ली। नाश्ता करते हुए शेर भालू से बोला—'मंत्री जी आपकी बात न मानकर मैंने भूल की। सभी को

इतना कष्ट सहना पड़ा। पर मैंने सोचा कि सारा पानी जब हमारे पास रहेगा तो हम उससे अधिक फायदा उठाएँगे। पड़ोसी राजा से कर लेकर फिर उसे पानी देंगे।'

भालू बोला—'महाराज! नदी का पानी तो भगवान की देन है। उस पर जितना अधिकार हमारा है उतना ही दूसरे का भी है। भगवान के ही बनाए हम सब हैं। भगवान ने ही सब चीजें दी हैं। सभी को मिल-जुलकर उनका प्रयोग करना चाहिए। इसी में सबकी भलाई है। जो किसी चीज पर अपना अधिकार जमाता है, वह जरूर दुःख पाता है।'

केसरी की समझ में भी बात आ रही थी। वह सिर हिलाता हुआ बोला—'ठीक कहते हो तुम! मेरी तुच्छ बुद्धि के कारण ही तुम सबको दुःख उठाना पड़ता है। इस घटना ने मेरी आँखें खोल दी हैं। अब से मैं अपने स्वार्थ को प्रमुखता नहीं दूँगा। दूसरों का भला सोचूँगा, क्योंकि स्वार्थी सदैव अंत में दुखी होता है।



चोरी का दंड

गोदावरी के तट पर एक मगरमच्छ रहता था। नाम था उसका सुबुद्धि। वह बड़ा ही ईमानदार और परिश्रमी था। वह मगरमच्छों के राजा के यहाँ सेवक था। उसके काम से राजा प्रसन्न रहा करते थे। उसकी लगन और अच्छे स्वभाव से वह बड़े खुश रहते थे। अतएव समय-समय पर कुछ उपहार देते रहते थे।

एक बार की बात है। सुबुद्धि का छोटा बच्चा बीमार पड़ गया। वह असल में था शरारती। अपनी माँ की आँख बचाकर घर से निकल जाता था, फिर दोपहर भर धूप में दोस्तों के साथ

धमाचौकड़ी मचाता रहता था। बुखार में भी वह घर से बाहर घूमता रहता था। इसीलिए उसका बुखार मियादी बन गया। नीतू लोमड़ी उसका इलाज कर रही थी। डॉक्टर नीतू ने खाना खाने को बिलकुल मना कर दिया। उसे मिलते थे केवल फल, दूध और चाय। सुबुद्धि तो गरीब था। रोज-रोज वह फल नहीं खरीद सकता था। कृपा करके राजाजी उसके बालक के लिए कुछ न कुछ फल दे दिया करते थे।

एक दिन उन्होंने सुबुद्धि को सेव दिए। सेव थे बड़े लाल-लाल। ऐसे सुंदर कि देखते ही मुँह में पानी भर आए। सेव की टोकरी पीठ पर रखकर सुबुद्धि घर को चला। चलते-चलते रास्ते में उसे प्यास लगी। उसने टोकरी किनारे पर रखी और झुककर पानी पीने लगा। किनारे पर घनी झाड़ियों में काली नाम की बिल्ली भी छिपी बैठी थी। उसकी निगाह सेव की टोकरी पर पड़ी। सिंदूर से लाल सुर्ख सेव देखकर उसके मुँह में पानी भर आया। मगरमच्छ पानी पीकर अपनी गरदन ऊपर उठाता, उससे पहले ही काली ने फटाफट आगे बढ़कर दोनों पंजों से टोकरी उठा ली। फिर वह उसे फुरती से लेकर पेड़ पर चढ़ गई।

पानी पीकर मगरमच्छ पल भर किनारे पर बैठकर सुस्ताने लगा। तभी उसे ध्यान आया कि घर पर बच्चा भूखा होगा। बस वह चलने को तैयार हो गया। पर यह क्या? उसकी फल की टोकरी गायब थी। सुबुद्धि ने चारों ओर नजर दौड़ाई, पर कहीं भी वह दिखाई न दी। किनारे पर उसे ढूँढ़ते-ढूँढ़ते वह परेशान हो गया और थक भी गया। वह सोच रहा था कि रोगी बच्चे को अब जाकर क्या खिलाएगा?

तभी उसकी निगाह पेड़ पर बैठी काली बिल्ली पर गई। वह गपागप सेव खाए जा रही थी। सुबुद्धि बोल उठा—'अरे मौसी! यह क्या? मेरी टोकरी लेकर तुम पेड़ पर जा बैठीं। मैं कितनी देर से खोज रहा हूँ।'

अपनी पीली-पीली आँखें निकालकर काली बोली—'चल हट! तेरी कहाँ से आई यह टोकरी। यह तो मुझे इस पगडंडी पर पड़ी हुई मिली थी।'

मगरमच्छ बड़ी देर तक काली को मनाता रहा। अपने भूखे बच्चे की दुहाई देता रहा, पर काली का दिल जरा भी न पसीजा। उलटे वह सुबुद्धि को चिढ़ाकर फल खाने लगी।

मगरमच्छ सारे दिन का हारा थका था। चलते-चलते उसके पैर दरद करने लगे। पर सोचा कि इस तरह छूट देने पर तो यह काली और भी उद्दंड हो जाएगी। अतः वह न्याय पाने के लिए वनराज सिंह के द्वार पर पहुँचा।

सिंह ने मगरमच्छ की सारी बातें बड़े ध्यान से सुनीं। फिर तुरंत अपनी अंगरक्षिका लोमड़ी को दौड़ाया। लोमड़ी जाकर काली को बुला लाई। न्याय के लिए दरबार लगा। एक ओर काली बड़ी अकड़कर, मूँछों पर बल देकर बैठी। वनराज के दूसरी ओर आँसू बहाता मगरमच्छ बैठा।

'तुमने सुबुद्धि की टोकरी क्यों उठाई?' वनराज ने पूछा।

'महाराज! वह तो रास्ते में पड़ी थी, मैंने वहीं से वह उठाई।' काली आँखें टिमटिमाते हुए बोली।

'पर काली रास्ते में पड़ी हुई चीज तुम्हारी कैसे हो गई?' वनराज दहाड़े, फिर आगे बोले—'रास्ते में कुछ पड़ा मिला तो वह तुम्हें मेरे पास जमा कराना था। दूसरों की चीज को अपना कहते शरम नहीं

आती। दूसरे की आँख बचाकर उसकी चीज लेना चोरी है। तुमने फलों की टोकरी चुराई है। अत: इसका दंड तुमको भुगतना पड़ेगा।'

वनराज ने ताली बजाई। तुरंत ही मंत्री रीछ उपस्थित हो गए। वनराज के आदेश से उन्होंने काली को एक मास की जेल में डाल दिया।

फिर वनराज मगरमच्छ से कहने लगे—'काली के निठल्लेपन और दूसरों को सताने की बात मैं बहुत दिनों से सुन रहा हूँ, पर कोई भी न्यायालय में आकर शिकायत दरज नहीं कराता। अपराधी को दंड देना भी बहुत जरूरी है। इससे वह आगे बुरा कार्य नहीं करता। तुम्हारे काम से मैं खुश हूँ।' सिंह ने बहुत सारे फल देकर मगरमच्छ को विदा किया। रात बहुत बीत चुकी थी, पर सुबुद्धि बड़ा प्रसन्न था। वह तेजी से अपने घर को लौट आया।



दो सहेलियाँ

एक मुर्गी थी और एक थी बतख। दोनों में बड़ी गहरी दोस्ती थी। नदी के किनारे दोनों घंटों बातें करती रहतीं और खेलती भी रहतीं। काम में भी दोनों एकदूसरे की सहायता करती थीं। मुर्गी के बिना बतख को चैन नहीं आता और न बतख के बिना मुर्गी को।

नदी में एक बगुला रहता था। वह सबकी बुराई करता था, दूसरों की चीजें चुराता था और गाली देता था। इसलिए कोई उसे अपने पास नहीं बैठाता था। अकेले रहते-रहते बगुला बड़ा ऊब जाता था। जब वह किनारे पर बैठा-बैठा बतख और मुर्गी की बातें सुनता, उनका खेल देखता तो बड़ी कुढ़न होती। उसने कई बार

कोशिश की थी कि बतख और मुर्गी उसे भी दोस्त बना लें, पर वे दोनों ही ऐसा गंदा मित्र नहीं चाहती थीं।

खाली दिमाग शैतान का घर होता है। जो काम में नहीं लगा रहता उसे शरारत ही सूझा करती है। बगुले ने सोचा कि किसी भी प्रकार से बतख और मुर्गी में फूट डलवाई जाए।

एक दिन बगुला पकवान लेकर बतख के यहाँ पहुँचा और बोला— 'बहन! आज मेरा जन्मदिन है, तुम्हारे लिए कुछ मिठाई लाया हूँ।

बतख ने मिठाई लेने से बहुत मना किया, पर बगुले ने एक न सुनी। वह टोकरी रखकर ही वापस आ गया।

कुछ दिन बाद बगुला आमों की टोकरी लेकर मुर्गी के यहाँ पहुँचा। वह कहने लगा—'दीदी! ये बड़े मीठे-मीठे आम मेरे ही बगीचे में लगे हैं, लो तुम चखकर देखो।'

मुर्गी ने आम रखने से बड़ा मना किया पर बगुला नहीं माना। कहने लगा कि मेरे यहाँ तो बहुत रखे हैं। यहाँ सड़कर खराब ही हो जाएँगे। बहुत आग्रह करने पर मुर्गी ने उन आमों को लौटाना भी उचित नहीं समझा।

फिर इसी प्रकार किसी न किसी बहाने से बगुला कभी मुर्गी के घर और कभी बतख के घर जाने लगा। धीरे-धीरे उसने एक रवैया अपनाया। जब मुर्गी के घर जाता तो बतख की बुराई करता। बतख के जाता तो मुर्गी की। इस प्रकार उसने एकदूसरे के विरुद्ध दोनों के खूब कान भरे।

मुर्गी और बतख के दिल भी अब पहले जैसे साफ नहीं रहे। उनमें धीरे-धीरे मनमुटाव होता जा रहा था। दोनों बात-बात पर चख-चख करने लगती थीं।

एक दिन तो हद हो गई। किसी छोटी सी बात पर बतख इतनी नाराज हुई कि उसने मुर्गी के पंख नोंच लिए। मुर्गी ने भी अपनी लाल-लाल आँखें निकालकर अपनी चोंच बतख की पीठ में गढ़ा दी।

नदी में एक पैर से मछलियों पर घात लगाए खड़े बगुला को यह देखकर मजा आ रहा था। वह जल्दी से किनारे पर आया। आँखें मटकाकर गरदन नचाकर बगुला बोला—'अरे! तुम दोनों ही एक से बढ़कर एक शक्तिशाली हो। देखें तो तुम दोनों में से आज कौन जीतता है?'

बगुले की बातों से दोनों उत्तेजित हो उठीं। बतख ने चोंच दबाकर जोर से मुर्गी की पूँछ खींची। मुर्गी ने भी गुस्से में भरकर कहा—'आ तो सही आज तुझे मारकर ही दम लूँगी।'

दोनों एकदूसरे को तेजी से चोंच और पंजों से नोंचने-खरोंचने पर जुटी हुई थीं। तभी उधर से एक हंस आया। बतख और मुर्गी का यह विकट युद्ध देखकर उसे बड़ा आश्चर्य हुआ। वह बोला—'बहनो! यह लड़ाई क्यों हो रही है? क्या किसी प्रतियोगिता के लिए अभ्यास कर रही हो।'

'नहीं! आज हम दोनों में से केवल एक ही जिंदा रहेगा। मुर्गी मुँह मोड़कर कहने लगी हो।'

हंस ने बीच-बचाव करके बड़ी मुश्किल से उनकी लड़ाई बंद कराई, पर फिर भी दोनों मुँह से बोल-बोलकर लड़ने लगीं।

'हूँ! मैं तेरी कमाई खाती हूँ न?' बतख कुछ बक-बक करके बोली।

'और तू मेरा सारा ही काम करती है न। मैं तो जैसे हाथ पर हाथ रखकर सारे दिन निकम्मी ही बैठी रहती हूँ।' मुर्गी कड़ककर बोली।

'किसने कहा तुमसे यह?' बतख ने प्रश्न किया।

'बगुले ने कहा था।' मुर्गी बोली।

'अरे बगुले ने ही मुझसे यह कहा था कि मुर्गी दीदी कह रही थीं कि मैं उनकी कमाई खाती हूँ।' बतख बोली।

हंस की समझ में सारी बात आ गई थी। धीरे-धीरे यह बात खुली कि बगुले ने ही मुर्गी और बतख दोनों को एकदूसरे के विरुद्ध भड़काया था।

हंस कहने लगा—'देखो! तुमने एक धूर्त की बातों पर विश्वास करने का क्या परिणाम भुगता है। तुमने बिना सोचे-समझे बगुले की बातों पर विश्वास किया। अच्छा होता यदि दोनों आपस में ही बात को कह-सुन लेतीं। तब न तो एकदूसरे के प्रति अविश्वास होता, न यह लड़ाई-झगड़े की नौबत आती।

मुर्गी और बतख दोनों ही बड़ी लज्जित हुईं। बतख को गले लगाते हुए मुर्गी बोली—'बहन! यदि आज हंस दादा न आते तो न जाने क्या होता?'

'हाँ! हम दोनों की मित्रता पर खूब जग हँसाई होती। किसी की बातों पर बिना सोचे-विचारे कभी विश्वास नहीं करना चाहिए। धूर्त व्यक्ति तो अपना मतलब साधने की ताक में सदा रहते ही हैं।' बतख कहने लगी।

'चलो चलें।' बतख ने चलने को अपनी गरदन उठाई। दोनों ने मिलकर नदी के किनारे हर जगह बगुले को छान मारा, पर वह तो डरकर पहले ही भाग गया था। फिर कभी वापस लौटकर नहीं आया।

अब तो मुर्गी और बतख पहले से भी ज्यादा पक्की सहेली बनकर रहती हैं।



जैसी करनी वैसी भरनी

बरगद का एक विशाल पेड़ था। उस पर एक मैना अपना घोंसला बनाकर रहती थी। उस मैना की एक बड़ी पक्की सहेली कोयल थी। बरगद के पेड़ को छोड़कर एक आम के वृक्ष पर रहती थी।

दोनों सहेलियाँ साथ-साथ काम करने निकलती थीं। साथ-साथ अपने बच्चों के लिए कपड़े बुनती थीं।

मैना जो भी पकवान बनाती थी तो कोयल के घर जरूर भिजवाती थी। इसी प्रकार कोयल भी मैना के यहाँ बढ़िया चीजें भिजवाती थी। फिर वह खाती थीं।

एक दिन मैना ने गोल-गोल, फूले-फूले मालपुए बनाए। वह उन्हें तश्तरी में रखकर कोयल को देने निकली। बरगद के पेड़ की ऊपर वाली डाल पर एक धूर्त कौवा बैठा था। गरम-गरम रस टपकते मालपुए देखकर उसके मुँह में पानी भर आया। उसका मन हुआ कि सारे के सारे मालपुए गपागप-गपागप खाता ही चला जाए। पर उसे मैना से माँगने में शरम आई। कुछ यह भी लगा कि पता नहीं वह देगी या नहीं।

उसने तुरंत एक उपाय सोचा। वह तेजी से डाल से उतरकर मैना के सामने आया और बोला—'नमस्ते मैना दीदी।'

कौवा पूछने लगा—'इतनी सुबह कहाँ चली दीदी?'

'बस जरा कोयल के घर जा रही हूँ।' मैना कहने लगी।

कौवा अपनी आवाज को थोड़ा मीठा बनाकर बोला—'ओह! मैना दीदी तुम कितनी सुंदर हो, तुम कितनी अच्छी हो, तुम कितनी परोपकारी हो। तुम सबको कितना प्यार करती हो। तुम मुझे बड़ी

अच्छी लगती हो। मैं तुम्हारी कुछ सेवा कर पाऊँ तो मुझे बड़ी प्रसन्नता होगी।'

मैना अपनी तारीफ सुनकर प्रसन्न होने लगी। कौवा उसके चेहरे को बड़े ध्यान से देख रहा था। समझ गया था कि उसकी बातें मैना पर असर डाल रही हैं। कौवा आगे कहने लगा— 'दीदी! तुम क्यों कष्ट करती हो? लाओ मैं ही इन्हें दे आऊँ। मैं इस समय खाली हूँ।'

मैना कौवा की बातों में आ गई। उसे जल्दी भी थी। घर जाकर बच्चों को नहलाना था। उसने तश्तरी कौवे को पकड़ा दी और खुद घर के अंदर घुस गई।

कौवा मालपुए लेकर फुरती से नीम के पेड़ पर जा बैठा। यहाँ उसने जीभर कर मालपुए खाए। उसका पेट भर गया, पर स्वाद ही स्वाद में खाता ही गया। तश्तरी में निकला रस भी उसने चाट-चाट कर खाया। फिर तश्तरी पेड़ के नीचे फेंक दी। झरने पर जाकर आराम से ठंढा-ठंढा पानी पिया। फिर नीम के पेड़ की कोटर में छिपकर सो गया।

इधर मालपुए बनाने की खुशबू कोयल के घर तक पहुँच गई थी। बड़ी देर से इंतजार कर रही थी कि कब मैना मालपुए भिजवाए और कब वह बच्चों को खिलाए। पुओं की खुशबू सूँघकर उसने बच्चों का खाना भी तैयार नहीं किया था।

कोयल इंतजार करती रही कि पुए अब आएँ-अब आएँ। पर ऐसे ही ऐसे शाम बीत चली। न मैना खुद ही आई, न उसने पुए ही भिजवाए। उसे बड़ा गुस्सा आया। वह सोचने लगी कि अब मैं कभी मैना के यहाँ पकवान नहीं भिजवाया करूँगी।

कोयल गुस्से में भरी खाना खा रही थी कि तभी मैना आई। वह बोली—'बहन! जरा तश्तरी तो दे दो।'

'कौन-सी तश्तरी?' कोयल मुँह फुलाए बोली।

'अरे! वही जिसमें मालपुए भिजवाए थे।'

'कैसे मालपुए? यहाँ तो कोई कुछ भी नहीं लाया।' मैना ने कहा।

मैना समझ गई कि यह सब चालाकी कौवे की ही है। उसने कोयल को सारी बातें बतलाईं।

कौवे ने यह शरारत पहली बार नहीं की थी। वह बड़ा ही आलसी था। काम कुछ करता नहीं था। दूसरों को धोखा देकर, उनकी चापलूसी करके उनसे कुछ न कुछ हड़प लिया करता था। मुर्गी, तोता, बतख, चिड़िया, बकरी, कुत्ता आदि सभी पशु-पक्षी उससे तंग आ गए थे। मैना और कोयल ने तय किया कि आज तो कौवे को दंड देना ही चाहिए जिससे कि आगे वह किसी को धोखा न दे।

मैना और कोयल दोनों कौवे को ढूँढ़ने निकलीं। मैना की निगाह नीम के पेड़ के नीचे पड़ी हुई तश्तरी पर गई। उसने सोचा कौवा भी इसके आस-पास ही कहीं होना चाहिए।

दोनों सहेलियों ने मिलकर नीम के सारे पेड़ को छान मारा। आखिर एक कोटर में कौवा मिल ही गया। वह सो रहा था, उसने इतना खाया था कि उसका पेट आगे को फूल गया था कोयल ने अपनी चोंच उसमें गढ़ाई, कौवा हड़बड़ाकर उठ बैठा। जैसे ही वह कोटर से निकलकर भाग रहा था कि एक नुकीली डाल उसकी आँख में अंदर घुसती चली गई। आँख से खून निकलने लगा। मैना दौड़कर डॉक्टर नीतू लोमड़ी को बुला लाई। उसने दवा लगाई, पट्टी बाँधी। पर कौवे की आँख

ठीक हो ही न पाई। आज तक एक ही पुतली काम करती है। जंगल के सभी जानवर आपस में कहते रहते हैं कि जो दूसरों का बुरा करता है, भगवान उसे दंड जरूर देता है। भगवान के यहाँ न्याय में देर हो सकती है, अंधेर नही हो सकता। कौवे को अपनी करनी का ही फल मिला है। सदाचारी तथा दूसरों का भला करने वाला व्यक्ति ही सुख-संतोष से रहता है। उसी को भगवान प्यार करते हैं।



बंदर की नासमझी

एक बहुत बड़ा तालाब था। उसमें बहुत सारी मछलियाँ रहती थीं। कुछ छोटी थीं, कुछ बड़ी थीं और कुछ रंग-बिरंगी थीं। वे कभी पानी में तैरती थीं। कभी खेलती थीं, कभी तालाब में डुबकी लगा जाया करती थीं।

तालाब के सामने बरगद का एक बहुत बड़ा पेड़ था। उसके नीचे बंदर और भालू आकर बैठ जाया करते थे। दोनों ही पक्के मित्र थे। वे तरह-तरह की बातें करते रहते थे।

तालाब के ही किनारे पर एक बगुला भगत रहा करते थे। वे कभी आँखें खोलकर, कभी बंद करके गपा-गप मछलियाँ खाते रहते थे। उनको मछली खाता देखकर भालू का मन ललचा जाता था, पर वह बगुलेराम बड़े ही चतुर थे। उन्होंने कभी भालू से बात तक न की थी। उन्हें डर था कि भालू से दोस्ती करने पर सारी मछलियाँ उसे ही खिलानी पड़ेंगी।

एक बार तो भालू के मुँह में पानी भर आया। उसने सोचा कि आज तो मैं जरूर मछली पकड़ूँगा, पर पकड़ता कैसे? पानी में उतरता तो डूब ही जाता। इसलिए उसने एक जाल बनाया और उसे तालाब में डाल दिया। पर भालू जाल बनाना क्या जाने? वह तो इस मामले में अनाड़ी था। इसका फल यह हुआ कि मछलियाँ जाल में फँसती फिर नीचे पानी में सरक जातीं।

भालू बंदर के साथ पेड़ के नीचे बैठा था। वह बड़ा ही खुश था। सोच रहा था कि आज तो हम खूब पेट भरकर मछलियाँ खाएँगे। थोड़ी देर बाद बंदर की सहायता से उसने जाल खींचा। पर यह क्या? उसमें तो मछलियों का नाम-निशान भी न था।

अब तो भालू काफी उदास हुआ। उसका मुँह उतर गया। उसके घर पर मेहमान बैठे थे। उनसे भी वह मछली लाने की बात कहकर आया था। उनको अब घर पर जाकर वह क्या खिलाएगा?

बंदर से मित्र की उदासी न देखी गई। वह अपने को बड़ा बुद्धिमान भी समझता था, वह बोला—'मित्र! तुम दुखी मत होओ। मैं अभी तुम्हारे सामने मछलियों का ढेर लगा दूँगा।'

वह कूदता-फाँदता गया। एक घर से रस्सी तोड़कर भागा। दूसरे से उसकी रोटी उठा ली। फिर वह जल्दी से तालाब के किनारे आया। बंदर की पूँछ लंबी तो थी ही। उसने अपनी पूँछ पर रस्सी बाँधी। फिर रोटी का एक टुकड़ा रस्सी के सिरे पर बाँधा। कुछ टुकड़े बीच-बीच में बाँधे। फिर वह रस्सी को पानी में डालकर तालाब के किनारे बैठ गया। उसे विश्वास था कि मछलियाँ रोटी खाने आएँगी। वे रस्सी से चिपक जाएँगी। तभी वह अपनी पूँछ खींच लेगा। इस प्रकार ढेर सारी मछलियाँ मिल जाएँगी। भालू ने

ऐसा करने से बहुत रोका। उसे डर था कि कहीं कोई दुर्घटना न हो जाए, पर बंदर न माना।

आखिर वही हुआ जो भालू ने सोचा था। तालाब में एक बड़ा सा कछुआ भी रहता था। उसने खेल-खेल में रस्सी को खींचा और खींचता ही गया।

इधर तालाब के किनारे बैठे बंदर की पूँछ भी रस्सी के साथ खिंचती ही चली गई। बंदर भी सँभल न पाया और तालाब में गिर पड़ा। भालू ने दौड़कर रस्सी को पूँछ से खोला, पर बंदर की आधी पूँछ ही रस्सी के साथ टूटकर गिर गई थी। भालू ने जैसे-तैसे उसे तालाब से बाहर निकाला। फिर भालू बंदर को अपनी पीठ पर चढ़ाकर डॉक्टर नीतू लोमड़ी के यहाँ ले गया। वहाँ उसकी मरहम-पट्टी कराई। फिर रास्ते भर भालू बंदर को समझाता रहा कि उलटे-सीधे काम नहीं करने चाहिए। दूसरों की बात माननी भी चाहिए। बंदर यह सब चुपचाप सुनता रहा। वह कहता भी क्या? यदि वह उसकी बात मान लेता तो उसकी आधी पूँछ भी क्यों टूटती?



चंचल गिलहरी

बरगद की कोतर में एक गिलहरी का परिवार रहता था। गिलहरी का एक बच्चा भी था। उसका नाम था चंचल। सुबह होते ही घर के सभी बड़े सदस्य जंगल की ओर चले जाते। वहाँ पर वे तरह-तरह के फल इकट्ठे करते थे और शाम को घर वापस लौट आते थे।

चंचल गिलहरी कोतर में अकेली रह जाती थी। उसका मन नहीं लगता था, इसलिए अपनी माँ से पूछ लिया। वह दोपहर में

मुर्गी काकी के यहाँ चली जाती थी। मुर्गी काकी भोजन की तलाश में बाहर चली जाती थी। पर उसके चारों चूजे घर पर ही रहते थे। वे सभी चंचल के मित्र थे।

एक दिन चंचल जब उनकी झोंपड़ी में पहुँची तो उसने पाया कि चारों चूजे सोए हैं। यह देखकर वह लौटने लगी। अचानक उसकी निगाह झोंपड़ी में लगे बड़े शीशे पर पड़ी। चंचल उसके सामने जा खड़ी हुई। वह बहुत ध्यान से अपने आप को देखने लगी। उसने सोचा कि खरगोश दादा के रोएँ कितने अच्छे हैं? उनका रंग कितना प्यारा है?

उसे अपने मित्र बकरी के बच्चे का ध्यान हो आया। सोचने लगी—'उसके सींग कितने सुंदर है?'

मुर्गी काकी की भी याद आई। चंचल अपने आप से कहने लगी—'मेरे भी मुर्गी काकी जैसे सुंदर रंगीन पंख होते तो कितना अच्छा होता।'

तभी चूजे उठ बैठे। दौड़ते हुए उसके पास आए और उससे बोले—'दीदी! हम कितनी देर से तुम्हारा इंतजार कर रहे थे। चलो अब खेलेंगे।

पाँचों मिलकर छुई-मुई का खेल खेलने लगे। चूजे बड़े शरारती थे। उस दिन तो उन्होंने बहुत ऊधम मचाया। एक ने छिपने के लिए झोंपड़ी में बने छेद में से निकलना चाहा, पर छेद छोटा था, उसका सिर ही उसमें फँस गया। सभी ने मिलकर पीछे से उसे खींचा, तब कहीं जाकर वह उससे बाहर निकला था।

दूसरा बच्चा छिपने के लिए अँगीठी के नीचे ही घुसने लगा। वह अभी गरम थी, उसका पैर जल गया। मरहम-पट्टी भी गिलहरी को ही करनी पड़ी।

तीसरा चूजा शीशे के सामने जा खड़ा हुआ। वहाँ उसे अपने जैसा ही दूसरा चूजा दिखाई पड़ा।

इस चूजे ने कुक्कड़-कुक्कड़ करके उससे बात करनी चाही पर वह चुप ही बना रहा।

इस चूजे ने अपनी चोंच चलाई, सुनते हो कि नहीं। शीशे वाले चूजे ने भी वैसा ही किया।

अब उसने अपने पंख फड़फड़ाए, इधर आओ मेरे पास। शीशे वाला चूजा आना ही नहीं चाहता था। अब इधर वाले चूजे को बड़ा गुस्सा आया। उसने आवेश में शीशे वाले चूजे के खूब चोंच और पंख मारने शुरू कर दिए। यहाँ तक उसकी चोंच से काफी खून झलकने लगा।

तभी टोकरी लिए मुर्गी काकी ने प्रवेश किया। चारों बच्चे उनकी ओर दौड़े। अभी वह ठीक से बैठने भी न पाई थी कि उस पर प्रश्नों की झड़ी लग गई।

'माँ! दरजी के यहाँ से मेरा कुरता ले आईं?

'माँ! मेरे लिए खरगोश दादा जैसा कान लाईं?'

'मेरे लिए चंचल दादा जैसी मूँछ लाईं?'

'देखो तो सही ये क्या-क्या चाहते हैं?' मुर्गी हँसकर चंचल से कहने लगी।

फिर वह चारपाई पर आराम से बैठ गई। छोटे को कुरता दिया और कहा ले पहनकर दिखाओ।

बाकी तीनों चूजों को देखते हुए बोली—'देखो! तुम ऐसी चीजें माँगते हो, जिनका लाना संभव नहीं। रंग-रूप तो भगवान की दी हुई चीज हैं। उसकी नकल क्यों करते हो? नकल करना ही

चाहते हो तो अच्छे गुणों की करो। तुम जितने अच्छे बनोगे, सभी तुम्हें प्यार करेंगे।'

चूजे तो अभी अपनी माँ से बहस कर ही रहे थे, पर गिलहरी की समझ में बात आ गई थी। वह खुशी से फुदकती हुई बरगद के पेड़ की ओर दौड़ पड़ी।



हाथी और चींटी

एक बार हरखू किसान ने अपने खेत में गन्ने बोए। खूब ही मीठे-मीठे और लंबे-लंबे गन्ने। ऐसे कि देखते ही खाने को मन ललचा जाए।

रास्ते में जा रही एक चींटी ने उस खेत को देखा। उसने अंदर घुसकर गन्ने का स्वाद लिया। उन्हें चखते ही वह प्रसन्न हो गई। दौड़ी-दौड़ी अपनी रानी चीनू चींटी के पास पहुँची। चीनू चींटी वहाँ से मील भर की दूरी पर आम के पेड़ की जड़ में घर बनाकर रह रही थी। उसके राज्य में हजारों अन्य चींटियों भी रहती थीं।

गुप्तचर चींटी ने महारानी चीनू को लाकर गन्ने के खेत की सारी बात बताई। चीनू चींटी ने आदेश दिया। तुरंत ही उनकी सारी सेना ही आम के पेड़ की जड़ में से निकल पड़ी। आगे-आगे चली गुप्तचर चींटी। वह गन्ने के खेत का रास्ता बता रही थी। उसके पीछे महारानी चींटी आ रही थी। उसके पीछे उसकी सेना की अन्य हजारों चींटियाँ चल रही थीं।

चींटियों की यह फौज गन्ने के खेत में पहुँची। गुप्तचर चींटी ने रहने के लिए अच्छी सी भुरभुरी मिट्टी वाली जगह तलाशी।

चींटियाँ तुरंत उसमें घुस गईं, तेजी से उन्होंने घर बनाए और फिर चीनू रानी को अंदर ले आईं।

दस-पंद्रह दिन तक चींटियाँ बड़े मजे में रहीं। खाने को जी भरकर गन्ने और घूमने के लिए लंबा-चौड़ खेत। बात करने को आस-पास की अनेक चींटी-चींटें के घर थे। चीनू चींटी दूसरों को सम्मान देती थी। ध्यान से सभी की बातें सुनती थी। दूसरों की सहायता करती थी, बोलती कम थी, काम अधिक करती थी। उसके इन गुणों के कारण आस-पास के चींटे-चींटियाँ उसका बहुत आदर और सम्मान करने लगे। सभी उनकी बात को ध्यान से सुनने और मानने लगे।

एक दिन हाथियों का एक बड़ा झुंड गन्ने के खेत में घुस आया। उन्होंने जीभर कर जड़ सहित गन्ने उखाड़े और खेत में घूम-घूमकर खूब खाए।

चींटियों के बहुत सारे बिल हाथियों के भारी-भारी पैरों से तहस-नहस हो गए थे। कुछ तो चींटियाँ भाग निकली थीं, पर कई हजार चींटियाँ वहीं मर गई थीं।

चीनू चींटी ने देखा कि खेत से जाते समय हाथियों का सरदार अपनी सूँड़ दूसरे हाथी के सिर पर फिराते हुए कह रहा था—'इस खेत का पता देने के कारण मैं तुमसे बहुत खुश हूँ। अब हम सभी प्रतिदिन यहाँ आया करेंगे।'

यह सुनकर चीनू चींटी के तो प्राण ही सूखने लगे। डर के कारण वह थर-थर काँपने लगी।

खेत में इधर-उधर छिपे हुए चींटे-चींटियों ने देखा कि सभी हाथी जा चुके हैं। वे तेजी से दौड़े आए। अपने-अपने परिवार के मृतकों को देखकर उनका कलेजा फटने लगा, वे रोने लगे।

इतने में चीनू रानी भी वहाँ आई। वह बोली—'भाइयो और बहनो! अब रोने से कुछ नहीं होगा। यह बड़े ही दुःख की बात है कि हमारे इतने भाई और बहन मरे, पर अब दुःख मानने और रोने की जगह हम यह सोचें कि कल हम सबकी रक्षा कैसे होगी? मैंने खुद सुना है कि वे दुष्ट हाथी अब रोज-रोज यहाँ आने की बात कह रहे थे।

यह सुनकर तो सभी अचंभे में आ गए। सभी यही कहने लगे—' हम सभी तो बहुत छोटे-छोटे हैं। हाथियों का हम बिगाड़ भी क्या सकते हैं?'

'पर संगठन और बुद्धिबल में बहुत अधिक शक्ति होती है। हम छोटे हैं तो क्या, कल सभी मिल-जुलकर उन्हें मजा चखाएँगे। डरकर भागना कायरता है।' चीनू कह रही थी।

फिर चीनू ने अपनी सारी योजना उन सभी को बतलाई। सभी के सभी ने अपना सिर हिला-हिलाकर कहा—'ठीक है। कल हम सब यही करेंगे।'

दूसरे दिन खेत में जैसे ही हाथी घुसे तो इधर-उधर छिपी हुई लाखों चींटियाँ निकल पड़ीं। सभी अधिक गुस्से में भरी हुईं थीं। चींटियों की एक-एक सेना एक-एक हाथी पर झपट पड़ी। पेट, पीठ, पैर, पूँछ, नाक, कान, सूँड़ सभी में घुसकर काटने लगीं। हाथी सूँड़ हिला-हिलाकर चिंघाड़ने लगे।

सबसे पहले हाथियों का नेता ही खेत में घुसा था। तैयार बैठी चीनू चींटी तुरंत उसकी सूँड़ में घुस गई। वह आगे बढ़ती ही जा रही थी। उसने हाथी के दिमाग में जाकर जोर से काटा और बोली—'बता! अब मारेगा हमें।'

हाथियों का नेता बोला—'अरे! मैं मरा, तू जल्दी से निकल जा। तेरे हाथ जोड़ता हूँ, अब हम यहाँ कभी नहीं आएँगे।'

यह सब सुनकर चींटी उस हाथी की सूँड़ से तुरंत ही बाहर निकल आई।'

हाथियों का नेता अपनी सूँड़ ऊपर उठाकर, दाँतों को निकालकर जोर से चिंघाड़ा—'भाइयो! यहाँ खैर नहीं है। तुरंत भाग चलो यहाँ से।'

अपने नेता की बात सुनकर सारे हाथी तेजी से खेत से बाहर निकलने लगे। चींटियों ने भी उनका पीछा करना छोड़ दिया और सभी नीचे उतर आईं।

सभी चींटियों ने चीनू की जय-जयकार की। वे आपस में कह रही थीं—'महारानी चीनू ने ठीक ही कहा था कि आपत्ति में भी यदि धैर्य रखा जाए, सभी मिल-जुलकर युक्ति से समस्या सुलझाएँ तो बड़े से बड़ा संकट भी टल जाता है। संगठित होकर धैर्यपूर्वक काम करने वाले सदैव विजय पाते हैं।



बैल की ऊर्जा

एक बार एक लोमड़ी को किसी बैल ने बचाया। लोमड़ी ने उसका बड़ा ही आभार माना। वह हाथ जोड़कर कहने लगी—'दादा! तुम्हारा यह उपकार मैं जीवन भर नहीं भूलूँगी। आज से मैं तुम्हारे साथ रहूँगी, तुम्हारा काम करूँगी।'

कुछ दिनों तक तो सब ठीक-ठाक चला, पर कुछ ही दिनों में लोमड़ी ऊब गई। बैल का जरा सा भी काम करना उसे बुरा ही लगता। बात-बात पर वह खीझ उठती।

एक दिन की बात है कि दोनों रात में चने के खेत में घुस गए। हरी-हरी फसल तैयार खड़ी थी। दोनों मुँह मार-मारकर खाने लगे। लोमड़ी का पेट तो छोटा था, थोड़ी देर में भर गया। पर बैल खड़ा खाता ही रहा। कुछ देर तक लोमड़ी बैठी रही। फिर बोली— 'दादा! इतनी देर हो गई, जल्दी चलो।'

'अभी पेट तो भर लूँ या यों भूखा ही ले चलोगी।' बैल ने खाते-खाते कहा।'

'मुझे तो यहाँ डाँस खाए ले रहे हैं। फिर डर भी है कि कहीं खेत वाला ही न आ जाए। लोमड़ी बोली।

'ऐसा कर कि तू बाहर बैठकर देखती रह। जैसे ही खेत के मालिक के आने की आवाज सुनाई पड़े तो धीरे से मुझे बता देना।' बैल कहने लगा।

लोमड़ी को मन ही मन गुस्सा आने लगा। वह बड़बड़ाने लगी—'इसका पेट है कि खदान। यह तो है नहीं कि जल्दी से खा-पीकर चलता बने। रोज-रोज मुझे दो घंटे ऐसे ही बिठाता है। किसी दिन इसके चक्कर में मुझ पर भी मार पड़ेगी। बच्चू! आज तुम्हें भी सबक नहीं सिखाया तो मेरा नाम लोमड़ी नहीं।'

बैल खाते हुए एक-दो बार बीच-बीच में पूछ भी लेता— 'कोई आ तो नहीं रहा है।'

'नहीं दादा! तुम जीभर कर आराम से खाओ, आज तो कोई आता नहीं लगता।' लोमड़ी मीठी वाणी में बोली।

बस फिर तो बैल पसरकर बैठ गया। चिंता छोड़कर वह खाने लगा। वह मन ही मन में खुश हो रहा था कि आज जैसा तृप्त होकर तो कभी नहीं खाया।

पर उसकी यह सारी तृप्ति धरी रह गई। पीछे से तड़ाक-तड़ाक दस-बारह डंडे उस पर पड़े। उसे लगा आज तो सारी हड्डियाँ ही चटक जाएँगी। जैसे-तैसे वह उठा फिर बड़ी कठिनाई से लंगड़ाता-लंगड़ाता, डंडे खाता और तमाम गाली सुनता हुआ खेत के बाहर आया।

'तूने मुझे बताया क्यों नहीं? गुस्से से अपनी आँखें लाल-लाल करते हुए बैल ने पूछा।

'मैंने तो उस आदमी को आते देखा ही नहीं।' लोमड़ी साफ झूठ बोल गई।

बैल उसकी मक्कारी समझ गया। वह भी बहुत दिनों से उसे सबक देने की सोच रहा था। आज तो वह गुस्से से दाँत पीसने लगा। मन ही मन बोला—'तेरी अकल ठिकाने न लगाई तो मेरा नाम भी हीरा बैल नहीं।'

छह दिनों बाद बैल बोला—'अरी सुनती है! नदी पार एक खेत में सुना है बड़ी भरी-पूरी फसल हुई है। चलेगी क्या? नदी किनारे तुझे मेंढक और चूहे भी मिल जाएँगे। लोमड़ी खुशी-खुशी उनके लोभ में राजी हो गई। वह तो उस लोमड़ी का अधिक प्रिय भोजन ही था।'

लोमड़ी तो नदी में चल नहीं सकती थी। बैल उसे अपनी पीठ पर बिठाकर नदी पार ले गया। वहाँ उन्होंने पेट भरकर खूब खाया। लोमड़ी ने तो नदी के किनारे मेंढ़क भी इतने खाए कि उससे खड़ा होना भी मुश्किल हो गया। जैसे-तैसे पेट सहलाती वह बैल की पीठ पर सवार हुई।

बीच धार में आकर लोमड़ी को एकाएक झटका लगा। वह चीखती हुई बोली—'यह क्या किया दादा।'

'अरी! मैंने तो डकार ली है।' बैल भी अनजान बनते हुए बोला। वास्तव में बात यह थी कि बैल लोमड़ी को सबक सिखाना चाहता था। इसलिए उसने ही जान-बूझ कर उस लोमड़ी को झटका दिया था।

लोमड़ी तुरंत समझ गई कि यह बैल की जान-बूझकर की गई करतूत है। पानी में वह बस डूबने ही वाली थी। जोर से चीखी—'बचाओ, दादा बचाओ।'

बैल उसे जान से मारना तो नहीं चाहता था। बस, थोड़ा सा सबक ही देना चाहता था। बैल ने तुरंत ही आगे बढ़कर लोमड़ी को पानी की तेज धार में बहने से रोका। अपनी पीठ पर चढ़ाकर नदी पार कराई।

किनारे पर आकर बैल कहने लगा—'तुझसे कुछ बात कहनी है। देख! तू यह न समझ कि तू ही बहुत तेज-तर्रार है। तुझमें चालाकी अधिक है तो मुझ में शारीरिक बल। तू यह न सोचना कि मुझे तंग कर लेगी।

लोमड़ी नीचे की ओर सिर झुकाए बैल की वे सारी ही बातें चुपचाप सुन रही थी।

बैल फिर बोला—'सुन! तू मेरे साथ नहीं रहना चाहती है, तो अभी से अलग रास्ते पर चली जा। मेरे साथ रहना है तो वफादारी से रहना होगा। मित्रता में एकदूसरे के साथ छल करना बहुत बुरा है। जब तक मन मिलते हैं तभी तक मित्रता होती है और तब ही साथ रहना अच्छा होता है। तेरे मन में मेरे लिए प्यार नहीं है। तू मेरा कुछ भी भला नहीं सोच सकती तो जा जिसे चाहे उसे दोस्त बना।'

लोमड़ी की समझ में अपनी सारी गलतियाँ आ गईं थीं। समय-समय पर उसने बैल के साथ जो बुरा व्यवहार किया था, वह

भी उसे याद आ रहा था। आज की घटना को छोड़कर बैल ने तो सदैव उसे माफ ही किया था, सदैव उसका हित ही सोचा था। ऐसा सीधा और भलाई करने वाला दोस्त लोमड़ी को मिलता भी कहाँ? वह आगे बढ़ी और बैल के मुँह से अपना मुँह रगड़ते हुए बोली— 'दादा! अबकी बार और माफ कर दो फिर कभी गलती करूँ तो मेरे कान पकड़कर खींचना।'

बैल ने भी उसके सारे अपराध भूलकर उसको फिर से मित्र बना लिया था।



सच्ची खुशी

चुन्नी नाम की एक भेड़ी थी। वह अधिक गरीब थी। उसके पास बच्चों को खिलाने के लिए खाना भी नहीं था। उसका पति भेड़ा मर चुका था। उसके चार छोटे-छोटे बच्चे थे। चुन्नी सुबह से लेकर शाम तक मेहनत करती थी, फिर भी वह खाने को जुटा नहीं पाती थी।

चुन्नी ने एक दिन सोचा—'अब तो गरीबी सहन नहीं होती। वह कुछ देर तक विचार करती रही। फिर वह उठ खड़ी हुई। उसने चारों बच्चों की और अपनी ऊन उतारी। उसे वह बेचने के लिऐ बाजार चल पड़ी। ऊन की गठरी पीठ पर लादे रास्ते में वह सोच रही थी कि यह ऊन बेचकर कुछ दिनों के लिए तो खाना-पीना जुटा ही लिया जाएगा।

रास्ते में चलते-चलते चुन्नी थक गई। धूप भी कड़ी पड़ रही थी। उसने झरने के पास जाकर पानी पिया। फिर बरगद के पेड़ के नीचे जाकर बैठ गई। उसे तेज भूख लगी थी, पर पास में खाने को कुछ भी न था। विवश होकर पेड़ के नीचे लेट गई। वहाँ कुछ ठंढक भी थी, थोड़ी देर बाद चुन्नी को नींद आ गई।

उधर से एक बंदर अपने बच्चे के साथ निकला। बंदर का बच्चा नंदू बड़ा ही शरारती था। वह दूसरों को अधिक तंग भी करता था। उसके पिता चंदर उसे इस बात पर प्रायः डाटते भी रहते थे।

नंदू पेड़ों पर से उछलता-कूदता उस बरगद के पेड़ पर पहुँचा। तभी उसकी निगाह पेड़ पर लटकी गठरी पर पड़ी। 'यह यहाँ कहाँ से आई? किसकी है यह? वह सोचने लगा।

तभी उसने देखा कि पेड़ के नीचे भेड़ सो रही है। वह समझ गया कि उसी की यह गठरी है। नंदू ने सोचा कि चुपचाप से उसकी गठरी गायब कर देता हूँ। यह इधर-उधर खोजेगी, रोएगी तो बड़ा मजा आएगा।

बस फिर क्या था, तुरंत वह ऊपर की डाली से उतरा। कूदता-फाँदता नीचे वाली डाली पर गया। वहाँ से गठरी उतारकर फिर पेड़ पर सबसे ऊपर जाकर बैठ गया। वहाँ उसका पिता बैठा रोटी खा रहा था। पर नंदू को भला रोटी क्या अच्छी लगती। वह तो अपने हाथों और मुँह से गठरी खोलने में जुटा था।

तभी चंदर की निगाह नंदू पर गई। 'यह तुम क्या कर रहे हो? किसकी गठरी उठा लाया है?' उसने डाँटकर पूछा।

नंदू ने मुँह पर उँगली रखकर चुप रहने को कहा और वृक्ष के नीचे सो रही भेड़ की ओर इशारा कर दिया।

चंदर बड़ा दुखी हुआ। बोला—'बेटा! मुझे बड़ा दुःख होता है कि मैं तुझे कुछ भी न सिखा पाया। तुम दूसरों को तंग करके मजा ढूँढ़ते हो। पर क्या तुम नहीं जानते कि दुखी आत्माओं की कितनी बद दुआएँ तुम्हें मिलती हैं। तुम्हारे जरा से मन बहलाव से कितने प्राणियों को कष्ट उठाना पड़ता है। अपना यह तरीका बदलो। दूसरों का भला करो, उनकी सहायता करो। उनके चेहरे पर आनंद-उल्लास लाने की कोशिश करो।

उनसे आशीर्वाद पाओ। इन सबमें जब तुम आनंद ढूँढ़ने लगोगे तो यह तुम्हारा जन्म ही सार्थक हो जाएगा। तुम्हें अपनी अबकी यह आदत बड़ी बाहियात और बचकानी लगने लगेगी।'

नंदू पिता की बातें चुपचाप सुनता रहा। तभी चंदर ने उसके हाथ से गठरी छीन ली। उसे लेकर वह नीचे वाली शाखा पर गया। वहाँ उसने गठरी लटका दी। चंदर ने देखा कि भेड़ बड़ी दुबली-पतली है। उसकी हड्डी-पसली तक दीख रही थीं। भूख के मारे वह पैरों को पेट में दबाए पड़ी थी। चंदर समझ गया कि उसने खाना नहीं खाया है। उसने अपने पास की दोनों रोटियाँ गठरी के ऊपर रखीं और पेड़ पर ऊपर चढ़ गया।

थोड़ी देर बाद भेड़ की आँख खुली। आँखों को मसलती हुई वह उठ बैठी।' भूख के कारण पेट चिपका जा रहा है, पर चलना तो पड़ेगा ही।' वह बुदबुदाई। फिर उसने एक अँगड़ाई ली। झरने के पास जाकर फिर दुबारा पानी पिया।' चलो आज पानी ही सही।' चुन्नी ने कहा।

फिर पेड़ के पास जाकर चुन्नी गठरी उतारने लगी। यह क्या? गठरी जैसे ही छुई तो दो रोटियाँ उससे टपक पड़ीं।

'कहाँ से आ गईं यह? वह सोचने लगी। उसने पेड़ के चारों ओर घूमकर देखा, पर कहीं-कोई दिखाई न पड़ा।'

'भगवान ने ही दया करके कहीं से यह मुझे दी हैं।' चुन्नी बुदबुदाई।' जिसकी रोटी हों उसका भगवान भला करे। वह कभी भूखा न रहे।' वह दुआएँ देने लगी।

चुन्नी भूखी तो थी ही, गपा-गप दोनों रोटियों को खा गई। खाकर उसे चैन मिला, उसका मुख संतोष से भर उठा। फिर गठरी उठाकर तेज कदमों से वह आगे बढ़ने लगी।

'क्या तुम्हें भेड़ की खुशी, उसके आशीर्वाद अच्छे नहीं लगे?'

'बहुत अच्छे लगे पिताजी।' नंदू कहने लगा।

'तो फिर आज से ऐसे ही कामों में आनंद लोगे न?' चंदर ने पूछा।

'हाँ पिताजी! अब मैं अपनी गलत आदतें छोड़ दूँगा।' किसी को भी तंग न करूँगा। यह कहते हुए नंदू अपने पिता बंदर के गले से लिपट गया।



मंत्री का चुनाव

अभयारण्य में भासुरक नाम का एक सिंह रहता था। वह बड़ा ही शक्तिशाली था। उसने वहाँ के सिंह राजा को युद्ध में हरा दिया था। क्योंकि वह जंगल के जानवरों पर अत्याचार करता था। जो चापलूसी करते थे, बस उन्हें ही पसंद करता था। भासुरक उसके स्थान पर अब स्वयं राजा बन गया था।

एक दिन भासुरक ने सोचा कि इतने बड़े राज्य पर अकेले तो शासन करना बड़ा कठिन है। किसी साफ बात करने वाले बुद्धिमान जानवर को मंत्री बनाया जाए। जिससे कि वह अच्छी सलाह दे और राज्य का हित हो।

एक दिन भासुरक घर से सोचकर गया कि आज जरूर मंत्री का चुनाव करेगा। राजसभा में पहुँचकर उसने आदेश दिया—'जंगल के सभी जीव-जंतु तुरंत यहाँ एकत्रित हो जाएँ।

फिर क्या था? सारा जंगल ही उमड़ पड़ा। रीछ, भालू, हाथी, चीता, लोमड़ी, गीदड़, कुत्ता, गधा, बंदर, भैंसा आदि सभी अपने-अपने नियत स्थानों पर आकर बैठ गए।

सिंह कहने लगा—"भाइयो और बहनो! मैंने आज एक विशेष कारण से तुम्हें बुलाया है। पड़ोसी राजा ने उपहार में इत्र भिजवाया है। सारे दरबार में वह छिड़कवाया गया है। तुम सबको उसकी सुगंध आ रही होगी।"

'हाँ! महाराज! बहुत अच्छी सुगंध आ रही है। कितनी दिल को प्रसन्न करने वाली है यह?" चिंटू खरगोश सिंह की बात बीच में काटते हुए बोल पड़ा। साथ ही साथ वह नथुने जोरों से सिकोड़कर गहरी साँस भर रहा था। जैसे सारी की सारी सुगंध को अपने अंदर भर लेने की कोशिश कर रहा हो।

यों चिंटू खरगोश सारे जंगल में अपनी चापलूसी के लिए प्रसिद्ध था। सभी उसकी यह आदत जानते थे, पर आज तो इस बात पर सभी उसकी शकल देखने लगे।

जंबू सियार सोचने लगा कि क्यों न मैं भी इसकी हाँ में हाँ मिलाऊँ। फिर मैं भी राजा का कृपापात्र बन जाऊँगा। उसने भी खड़े होकर और भी अधिक जोर-जोर से कहा—'महाराज! आज तो सारा दरबार महक रहा है।'

जंबू सियार की भाँति टिंकू हाथी ने भी सोचा कि मुझे भी राजा की चापलूसी करनी चाहिए। इसी प्रकार एक-एक करके जंगल के सभी जीवों ने वही सोचा। धीरे-धीरे करके सभी यही कहने लगे— 'वाह महाराज! आज तो यहाँ सुगंध भरी पड़ी है।'

कुछ जानवर तो वास्तव में ही चापलूस थे। वे राजा को प्रसन्न करना चाह रहे थे। कुछ को यह भय था कि पहले राजा की भाँति कहीं समर्थन न करने पर भासुरक भी नाराज न हो जाए। इसलिए वे झूठ-मूठ प्रशंसा कर रहे थे।

सारे दरबार में बस एक टीपू भालू ही ऐसा था जो चुपचाप बैठा था। भासुरक ने एक उड़ती निगाह सभी के चेहरे पर डाली। सभी अपनी पूँछ हिलाकर, आँखें नचाकर राजा का समर्थन कर रहे थे, पर टीपू बिलकुल चुपचाप बैठा था।

'टीपू भालू! तुमने इत्र की कोई तारीफ नहीं की।' भासुरक जोर से दहाड़ा।

चुपचाप खड़े होते हुए हाथ जोड़कर वह भासुरक से बोला— 'महाराज! मुझे तो कोई गंध आ नहीं रही है।'

'तुम झूठ बोलते हो।' सिंह गुस्से में भरकर बोला।

'नहीं राजन! मैं जैसा अनुभव कर रहा हूँ, वैसा ही कह रहा हूँ।' भालू सिर झुकाकर बोला।

'तो क्या यह सारी प्रजा झूठ ही कह रही है?' सिंह फिर पूछने लगा।

'इनकी बात तो मैं नहीं जानता, पर जब मुझे गंध नहीं आ रही तो फिर कैसे कह दूँ?' टीपू ने कहा।

'तुम मेरी बात काटते हो। तुम्हें इसका दंड भुगतना ही होगा।' सिंह बोला। फिर उसने कहा कि भालू को छह महीने के लिए जेल में डाल दिया जाए। सेनापति वानरदेव ने आकर तुरंत उसके हाथों में हथकड़ी डाल दी।

'अब भी अपनी गलती मान लो।' सिंह ने भालू से कहा।

'मैं किसी के दबाव में आकर गलत कार्य नहीं कर सकता।' भालू कहने लगा और आगे बढ़ने को तैयार हो गया।

'महाराज! यह बड़ा धूर्त है। आपकी अवज्ञा कर रहा है।' चिंटू और जंबू ने राजा के कान भरे। सभी को लगा कि अब

जरूर भालू को और कड़ा दंड ही मिलेगा। जरूर सिंह उसे मार डालेगा।

सभी ने देखा कि भासुरक अपने सिंहासन से उठकर भालू की ओर बढ़ रहा है। उनकी साँस रुक गई, उन्हें लगा कि भालू अब दो-चार पल का ही मेहमान है।

पर यह क्या? सिंह ने आगे बढ़कर टीपू के बंधन खोल दिए थे। वह टीपू को गले लगाते हुए कह रहा था—'टीपू! मैं तुम्हारी निर्भीकता से बहुत प्रसन्न हूँ। तुम्हें अपना प्रधानमंत्री बनाता हूँ।

'भासुरक ने टीपू को अपने पास वाले सिंहासन पर बिठाया। फिर अपनी प्रजा से बोला—'मुझे यह जानकर बड़ा दु:ख हुआ कि मेरी प्रजा चापलूसी पसंद करती है। दरबार में कैसा भी इत्र नहीं बिखराया गया है। इतना धन हम व्यर्थ के कार्यों में क्यों खरच करेंगे, उसे राज्य के हित में ही लगाएँगे।

'भाइयो! आप यह भूल जाइए कि पहले राजा की भाँति मुझे भी चापलूसी पसंद है, श्रेष्ठ कार्य नहीं। मैं चाहता हूँ कि आप गुणों से मेरे प्रिय बनने की कोशिश करें। मुझे काम ही पसंद है, चापलूसी कतई पसंद नहीं।'

फिर टीपू की प्रशंसा करते हुए वह कहने लगा—'राज्य की उन्नति टीपू जैसे निर्भीक और सच बोलने वालों से हुआ करती है। अब मैं यह पूर्णरूप से आशा करता हूँ कि मेरी समस्त प्रजा टीपू जैसी महान बनेगी।

सभी जानवरों ने तालियाँ बजाकर राजा की बात का समर्थन किया। सारा दरबार 'महाराजा भासुरक की जय 'टीपू मंत्री की जय' के नारों से गूँज उठा। 

किसान की परीक्षा

बहुत पुरानी बात है। कान्यकुब्ज में एक राजा राज्य करता था। एक बार उसे अपने खजाने की रक्षा के लिए कोषाध्यक्ष की जरूरत पड़ी। राजा चाहता था कि कोई ईमानदार और निर्लोभी व्यक्ति ही इस पद पर रखा जाए। पर ऐसे व्यक्ति को ढूँढ़ना सरल नहीं था। अनेक व्यक्ति राजा द्वारा ली गई परीक्षा में असफल हो चुके थे।

राजभवन से आधा मील दूर एक गरीब किसान रहता था। टूटी–फूटी एक उसकी झोंपड़ी थी। वर्षा ऋतु में जब उससे पानी टपकता था तो वहाँ बैठना भी दूभर हो जाता था। किसान और उसका परिवार दिन में बस एक बार रूखी–सूखी रोटी खाता था। उसका सारा परिवार फटे–पुराने कपड़े पहनता था।

एक दिन किसान सुबह–सुबह अपने खेत पर जा रहा था। सहसा उसकी निगाह झोंपड़ी के द्वार पर पड़ी। उसके पास मिट्टी का एक सुंदर सा घड़ा रखा था। उसका मुँह कपड़े से ढका था। किसान को बड़ी उत्सुकता हुई कि यह क्या है? उसने घड़े को खोलकर देखा। कपड़ा हटाते ही उसकी आँखें चौंधिया गईं। घड़ा तो स्वर्ण मुहरों से खचाखच भरा था।

किसान उसे लेकर तुरंत घर में घुस गया। उसने यह घड़ा पत्नी को दिखाया। उसके चारों बच्चे भी वहाँ इकट्ठे हो गए थे। बच्चे सोच रहे थे कि अब तो हमारी सारी गरीबी दूर हो जाएगी। हम भी अच्छे कपड़े पहनेंगे, अच्छा खाएँगे। बड़ा बेटा कहने लगा—'पिताजी! इतने ढेर सारे धन से तो अब हमारे सभी के सारे दु:ख दूर हो जाएँगे।

किसान कहने लगा—'पुत्र! इस धन पर हमारा क्या अधिकार है? इसे तो मैं अभी जाकर राजा के खजाने में जमा ही करा दूँगा।

ध्यान रखो। मुफ्त का धन कभी सुख नहीं देता। वह अपने साथ रोग, शोक, पतन और संकट लेकर आता है। ईमानदारी और परिश्रम की कमाई ही फलती है।

किसान और उसकी पत्नी दोनों राज-दरबार में पहुँचे। सोने की मुहरों से भरा घड़ा राजा के सामने रखते हुए बोले—'महाराज! यह हमें अपनी झोंपड़ी के द्वार पर पड़ा हुआ मिला है।'

राजा ने देखा—एक कृषक अपनी पत्नी के साथ उनके सामने खड़ा यह कह रहा है। राजा ने बड़े गौर से उन्हें देखा, दोनों के शरीर पर पेबंद लगे मटमैले कपड़े थे। गरीबी उनकी वेशभूषा से साफ झलक रही थी।

राजा बोला—'क्या तुम्हें धन की जरूरत नहीं?'

'पर हम ईमानदारी और परिश्रम से धन कमाएँगे। इस धन को मैं कैसे ले लूँ? यह न जाने किसका है? दूसरे के धन पर मेरा क्या अधिकार है? इसलिए मैं इसे राज्य के खजाने में जमा करने आया हूँ।' किसान यह कह रहा था।

राजा कुछ सोने की मुहरें किसान की पत्नी को देता हुआ बोला—'मैं तुम दोनों की इस ईमानदारी से बहुत खुश हूँ। लो यह कुछ ईनाम लो।'

'राजन! यह तो हमारा कर्त्तव्य है।' किसान की पत्नी ने कहा और मुहरें लेने से साफ इनकार कर दिया। किसान भी सिर को हिला-हिलाकर 'नहीं-नहीं' कर रहा था।

अब राजा से न रहा गया। वह अपने सिंहासन से उतर पड़ा। किसान को गले लगाता हुआ बोला—'मुझे तुम्हारे जैसे ईमानदार कोषाध्यक्ष की ही जरूरत है। आज से तुम राज्य के खजाने की देखभाल करो।'

किसान और उसकी पत्नी ने यह कभी स्वप्न में सोचा भी न था कि कभी वे इतना बड़ा पद प्राप्त करेंगे। दोनों के मुख प्रसन्नता से चमकने लगे।

यह तो उन्हें बहुत बाद में पता लगा कि उनकी परीक्षा के लिए वह घड़ा राजा ने रखवाया था। अन्य व्यक्तियों ने तो अपने द्वार पर घड़ा पाकर उसमें से मुहरें निकाल कर उन्हें अपने-अपने घरों में छिपा लिया था। राजा ने उन सबको चोरी के आरोप में कड़ी सजा दी थी। घड़े को जमा कराने वाला एकमात्र व्यक्ति किसान ही था।



गीदड़ का विवाह

अन्नू नाम का एक गीदड़ बड़ा ही आलसी था। उसे कोई भी काम करना बुरा लगता था। अपने आलस के कारण कभी-कभी तो वह भूखा ही सो जाता। बिना हाथ-पैर हिलाए आसानी से जो कुछ उसे मिल जाता, उसे वह खा लेता। फिर यह पड़ा-पड़ा अलसाता रहता था। अपनी पूँछ को हिलाकर मच्छर-मक्खी उड़ाता रहता।

एक बार जब वह सो रहा था तो उसने बड़ा मीठा एक सपना देखा। सपना यह था कि उसका विवाह हो रहा है। सारा घर मिष्टान्न की खुशबू से महक रहा है। इतने में ही चंटू ने बाँग दे दी और गीदड़ की आँख खुल गई।

अन्नू ने आँखें मलकर चारों ओर देखा। न उसका विवाह हो रहा था और न वहाँ मेहमान ही थे। अन्नू दौड़ा-दौड़ा कुप्पू

कुम्हार के पास गया। वह उस जंगल का बहुत बड़ा ज्योतिषी था। अन्नू ने उसे अपना सपना बताया और पूछा—'इसका क्या फल होगा?'

कुप्पू सियार ने अपनी गरदन हिलाते और उँगलियों पर कुछ हिसाब लगाते हुए थोड़ी देर तक कुछ सोच-विचार किया। फिर बोला—'यह सपना तुमने ब्राह्ममुहूर्त में देखा है। इसलिए निश्चित ही यह सपना सच होगा।'

'कब तक होगा महाराज?' बड़ी उत्सुकता से अपनी पूँछ हिलाते हुए गीदड़ ने पूछा।

'शीघ्र—जल्दी से, आज या कल में ही सच होगा।' ज्योतिषी नाक पर से चश्मा उतारकर बोला।

कुप्पू की बात सुनकर अन्नू का अंग-अंग फड़कने लगा। उसने कभी सोचा तक न था कि उसका विवाह इतनी जल्दी ही हो जाएगा। वास्तव में बात यह थी कि उसके आलस और निकम्मेपन से सभी परिचित थे। इसलिए कोई भी गीदड़ अपनी बेटी का विवाह उससे नहीं करना चाहता था।

अन्नू दौड़ा-दौड़ा गया। पूरे गाँव भर को अपने विवाह का न्योता दे आया। दूसरे दिन शाम को सात बजे उसने सभी को प्रीतिभोज के लिए निमंत्रण दे दिया। कुछ गीदड़ों को तो अचंभा हो रहा था कि कौन ऐसा मूर्ख है, जिसने इस गीदड़ से अपनी पुत्री का विवाह तय किया है। कुछ होने वाली वधू के भाग्य पर मन ही मन तरस खा रहे थे। कुछ साथी गीदड़ों ने अन्नू को छेड़ा भी कि कैसी है तेरी होने वाली वधू? अच्छी है न, सुंदर तो है न? अन्नू उनकी बात सुनकर लजाकर हँस जाता।

दूसरे दिन सुबह से ही अन्नू ने बढ़िया-बढ़िया पकवान बनवाने आरंभ कर दिए। मुर्गी काकी, लोमड़ी मोसी, गाय दादी, भैंस नानी आदि सभी मिलकर बना रही थीं। गीदड़ राम शान से बढ़िया सूट पहने दरवाजे के पास खड़े थे। उन्हें पूरा-पूरा विश्वास था कि बस कुछ देर में कोई न कोई गीदड़ अपनी पुत्री की उँगली थामे उनके दरवाजे पर आता ही होगा।

अन्नू को दरवाजे पर खड़े-खड़े शाम हो गई। उनके पैर दुखने लगे, पर कोई भी गीदड़ी विवाह के लिए नहीं आई। घर के अंदर पकवान पूरी तरह बन चुके थे। मेहमानों के आने का समय हो गया था। अब तो अन्नू का दिल धक-धक करने लगा। यदि वधू न आई तो इतने मेहमानों को वह क्या मुँह दिखलाएगा।'

पर ज्योतिषीजी की बात न सच होनी थी न हुई। मेहमानों की कतारें भी आनी शुरू हो गईं। खाना तो पहले ही तैयार हो चुका था। लाचार होकर उसे सभी मेहमानों को दावत खिलानी ही पड़ी। अन्नू गीदड़ मन ही मन उस ज्योतिषी को हजारों गालियाँ देता फिर रहा था।

खाना खा चुकने के बाद सभी पूछते—'वधू दिखलाई नहीं दे रही है, वधू कहाँ है?'

सियार ने पहले ही इसका उत्तर सोच रखा था। लाचार, बेचारा और करता भी क्या? वह नकली हँसी चेहरे पर लाता, लजाता और कहता—'भाई! वह यहाँ से दस जंगल दूर पर रहती है न। उसे रास्ते में ही कहीं देर लग गई है। यह दावत तुम अग्रिम ही समझो।'

सभी उसकी मूर्खता पर मन ही मन हँसते हुए चले जाते। एक बुजुर्ग सियार ने तो कह भी दिया—'बेटा! दावत की ऐसी भी क्या जल्दी पड़ी थी, वधू आ जाती तभी करते।'

मेहमान तो खा-पीकर चले ही गए। पर उस रात अन्नू को बिलकुल नींद नहीं आई, रह-रहकर उसे ज्योतिषी पर गुस्सा आ रहा था। न वह सपने पर विश्वास करता, न ज्योतिषी के चक्कर में पड़ता और न उसकी यह दुर्गति होती।

सुबह होते ही क्रोध में भरा अन्नू ज्योतिषी के यहाँ गया। वह रास्ते भर सोचता गया, दुष्ट की खूब खबर लूँगा। पर उसकी बात भी मन ही मन में रह गई। कुप्पू की पत्नी ने उसे घर के अंदर तक न घुसने दिया। खिड़की से ही कह दिया—'वे तो सिंह वनराज के यहाँ कल से ही चले गए हैं। अब वे पंद्रह-बीस दिन के बाद ही लौटेंगे।'

अन्नू ने अपना सिर ही पीट लिया। उसकी हिम्मत न पड़ी कि उस जंगल में वह रहे और सभी की हँसी का शिकार बने। वह घर पर आया, एक गठरी में जरूरत की चीजें बाँधी। फिर सदैव के लिए वह जंगल छोड़कर चला गया।

रास्ते भर अन्नू सोचता जा रहा था—'मैं कितना मूर्ख हूँ, जो मैंने सपने को सच माना। हाय! ज्योतिषी पर विश्वास करके मैं चौपट हो गया। जीवन सपने से नहीं बनता, पुरुषार्थ से ही बनता है। जो भी कुछ हमें मिलता है, अपने ही प्रयास से मिलता है। स्वप्न के फल और हाथ की रेखाओं की जगह यदि अपने कर्म पर विश्वास किया जाए तो फिर कभी पछताना नहीं पड़ता।

इसके बाद उसने कान पकड़कर उमेठे और कसम खाई कि आज से आलस छोड़ दूँगा, मेहनती बनूँगा।

दूसरे जंगल में जाकर अन्नू खूब मेहनत से काम करता था। अपने पुरुषार्थ से थोड़े ही दिनों में सुंदर सा घर बना लिया और

सबकी सेवा-सहायता भी करता था। उसके इन गुणों से गीदड़ों का मुखिया प्रसन्न हुआ। उसने अपनी सुंदर सी इकलौती बेटी का विवाह उसके साथ कर दिया। इस प्रकार अपनी मेहनत से अन्नू का सपना सच हो गया।



चूहे के कान लंबे क्यों?

तालाब के किनारे एक चूहा रहता था। वह अपने बाल-बच्चों सहित प्राय: बिल से बाहर आ जाता था। वहाँ बैठकर वह सफेद-सफेद रूई-सी बतख को देखता रहता था कि कितना अच्छा होता यदि मेरे बच्चे सफेद-सफेद होते।

एक दिन चूहे ने देखा कि बक-बक करती, अपने पंखों से पानी उछालती बतख चली आ रही है। वह पूछने लगा—'बहन जी! आप तो बड़ी ही सुंदर हैं। मुझे भी बताइए कि मेरा रंग आपके जैसा कैसे हो सकता है?'

बतख यह सुनकर हँसी, शान से अपनी गरदन उठाई और आगे बढ़ चली।

चूहे को अधिक बुरा लगा। पर दूसरे दिन उससे न रहा गया। उसने बतख से फिर प्रश्न किया।

बतख बोली—'दोस्त! तुम रंग की परवाह क्यों करते हो? सफेद या काले रंग से क्या होता है? तुम सच बोलो, दूसरों की मदद करो। मीठी वाणी बोलो, विनम्र बनो। फिर तुम देखोगे कि सभी तुम्हें प्यार करते हैं।'

पर ये बातें चूहे की कुछ समझ में नहीं आईं। उसने सोचा—'बतख मुझको गोरे होने का उपाय बताना ही नहीं चाहती। यह तो बड़ी घमंडी है।'

चूहा गाय के पास गया। सभी से उसने गोरे होने का उपाय पूछा। सभी उसकी बात पर हँसते और आगे बढ़ जाते।

चूहा बड़ा ही निराश हुआ। अंत में एक दिन वह खरगोश के घर पर पहुँचा। तेजू खरगोश आराम से बैठा-बैठा लाल-लाल सेव कुतर रहा था।

'नमस्ते खरहा भाई।' चूहा बोला।

'आओ-आओ भाई। तुम्हारा स्वागत है।' खरगोश ने चूहे के आगे सेव रखते हुए कहा।

सेव बड़े मीठे थे। चूहे ने खूब जी भरकर खाए। फिर उसने खरगोश के सामने अपनी बात रखी।

चूहे की बात सुनकर खरगोश मन ही मन हँसा। उसने सोचा कि चूहे को ऐसा उत्तर देना चाहिए कि आगे से फिर वह प्रश्न सबसे न पूछता फिरे।

खरगोश ने तनिक अपनी मूछों को खुजाया फिर बोला— 'अरे! यह कौन सा कठिन काम है दोस्त। आज ही लो, तुम्हारा रंग-रूप बिलकुल मेरे जैसा हो जाएगा।'

खरगोश ने चूहे से कहा कि मेरे पीछे-पीछे चलते आओ, मैं जैसा कहूँ वैसा करो।

आगे-आगे खरगोश चला, पीछे-पीछे चूहा। दोनों श्यामा काकी की रसोई की नाली में से होकर अंदर घुसे। खरगोश ने रसोईघर में थोड़ा घूम-फिरकर देखा कि एक कढ़ाई में थोड़ी चासनी रखी थी। बस उसका काम बन गया। उसने चूहे को इशारा किया कि वह कढ़ाई में अच्छी तरह से लोट लगाए।

चूहे ने कढ़ाई में गिरकर वहाँ खूब उछल-कूद की। अच्छी तरह शरीर पर चाशनी लपेटने के बाद बाहर निकला।

फिर खरगोश उसे दूसरे कमरे में ले गया। वहाँ बहुत सारी रूई भरी थी। खरगोश ने चूहे को उसमें भी खूब लोट-पोट होने को कहा। चूहे ने ऐसा ही किया।

फिर खरगोश उस चूहे को लेकर अपने घर आया। वहाँ उसे शीशा दिखाया। चूहे ने जैसे ही अपना प्रतिबिंब देखा तो वह खुशी से उछल पड़ा। यह क्या? उसका सारा ही शरीर खरगोश जैसा सफेद-सफेद और फूला हो गया था। चूहे ने खरगोश को बहुत-बहुत धन्यवाद दिया। फिर वह अपने घर वापस लौटा।

रास्ते में चूहे को जो भी देखता, आँखें फाड़कर देखता ही रह जाता। वह बड़ा विचित्र लग रहा था। जंगल के जानवरों ने ऐसा अजीब जीव कभी न देखा था।

सबसे पहले उसको कौवे ने देखा। वह डरकर भागा, काँव-काँव करके मैना, तोता, हंस, बतख, बंदर, रीछ, शेर सभी को यह बता आया कि उनके जंगल में एक विचित्र जीव आया है। वह सभी को नष्ट कर देगा।

फिर क्या था? सभी जानवर, सभी पक्षी मिलकर निकले। जैसे ही चूहे को देखा तो उसे सब मारने को पिल पड़े। चूहा चूँ-चूँ करके रोने लगा।

'मैं तो चूहा हूँ, मैं तो चूहा हूँ।' ऐसा जोर-जोर से पुकारने लग गया था।

'यह झूठ बोलता है।' तोते ने जोर से कहा।

'नहीं भाई! यह ठीक ही कह रहा है।' भीड़ को चीरते हुए खरगोश आगे आकर बोला।

'पर यह कैसे हो गया?' कौवा पूछने लगा।

खरगोश ने सारी कहानी सुनाई। तब सभी जानवर अपने घर वापस लौट गए। 'मूर्ख है यह।' कहते हुए तोता, मैना सभी उड़ चले। रह गया केवल खरगोश।

आज चूहे को बड़ी ग्लानि हो रही थी। सभी ने उसका खूब ही मजाक बनाया था। दु:ख के कारण सिसक-सिसककर रो रहा था।

खरगोश ने चूहे की पीठ पर हाथ फिराया। उसको सांत्वना दी, थोड़ा समझाया और उसके आँसू पोंछे। फिर तालाब के किनारे ले जाकर स्नान कराया तब सारी चासनी और रूई साफ हुई।

खरगोश ने भी चूहे को बतख की भाँति ही समझाया। वह कहने लगा—'भाई! जो बुरी बात सोचता है, वह बुरा होता है। जो बुरे काम करता है, उसका बुरा ही होता है। जो अच्छे काम करता है, उसे सभी प्यार करते हैं। फिर वह चाहे काला हो या गोरा। चाहे वह कुरूप हो या सुंदर। सभी चाम को नहीं, काम को प्यार करते हैं। तन को साफ-सुथरा रखो और अपने अंदर सुंदर गुण विकसित करो। यही सच्ची सुंदरता है।'

अब चूहा सोचने लगा कि काश! मैं पहले ही उस बतख की बात मान लेता तो मेरी इतनी हँसाई नहीं होती। चूहे ने अपने कान पकड़े, उन्हें पकड़-पकड़कर खूब खींचा और प्रतिज्ञा की कि आगे से अब ऐसी बेवकूफी कभी नहीं करेगा। तुमने देखा होगा कि आज भी चूहा के कान लंबे होते हैं। 

सियार की चालाकी

यों किट्टू सियार की चालाकी के किस्से सारे जंगल में फैले थे। उसकी धूर्तता को सभी जानते थे। कोई जानवर उसके पास नहीं आना चाहता था, पर कभी-कभी कोई जानवर ज़रूरत का मारा आ ही जाता था।

एक बार की बात है कि श्यामा बकरी ने अपने खेत में धान बोए। वर्षा उस साल बड़ी कम हुई। वह सोचने लगी कि अब खेत में पानी कैसे लगाऊँ? मुझे पानी कहाँ से मिलेगा? सभी जानवरों की फसलों को पानी की जरूरत तो है ही। फिर मुझे फसल के लिए पानी कौन देगा?

तभी उसे किट्टू सियार की याद आई। उसने उस वर्ष कुछ भी नहीं बोया। श्यामा को विश्वास था कि वह उसे पानी दे देगा, भले ही पैसे कुछ अधिक ले ले।

श्यामा बकरी रुपयों से भरा थैला अपने थन में लटकाकर उस सियार को ढूँढ़ने निकली। वह तालाब के किनारे बैठा ठंढी-ठंढी हवा खा रहा था।

'नमस्ते सियार भैया।' बकरी नम्रता से बोली।

'नमस्कार काकी।' किट्टू सियार बोला।

बकरी ने सियार को सारी बातें बताईं। फिर उससे विनती की कि कुछ महीने को अपना तालाब उसे भी दे दे। जिससे धान की खेती को सूखने से बचाया जा सके।

बकरी चाहती थी कि वह तालाब के बदले सियार को आधी फसल दे देगी। पर वह इसके लिए तैयार न हुआ।

कुछ देर सोच-विचारकर किट्टू बकरी से बोला—'काकी! यदि तुम मुझे सौ रुपए दे दो तो एक महीने को मैं अपना तालाब तुम्हें दे सकता हूँ।

श्यामा इस बात पर भी तैयार हो गई। क्योंकि ऐसा न करने पर उसकी सारी की सारी फसल ही मारी जाती।

दूसरे दिन श्यामा बकरी बाल्टी लेकर पानी भरने आई। पर सियार ने उसे तुरंत रोक दिया। बोला—'तुम इस तालाब का पानी नहीं ले जा सकतीं।'

'पानी क्यों नहीं ले जा सकते? मैंने कल ही तो तुम्हें १०० रुपए दिए हैं।' श्यामा बोली।

'काकी! तुमने तो इस तालाब के रुपए दिए हैं। इस पानी के नहीं। इस तालाब के पानी पर तो अभी मेरा अधिकार है।' सियार ने कहा।

अब तो बकरी बड़ी ही परेशान सी हो गई। रुपए के रुपए गए और खेत का खेत सूख रहा है। वह रोती-गिड़गिड़ाती वनराज सिंह के द्वार पर पहुँची।

सिंह महाराज ने बकरी की सारी बातें ध्यान से सुनीं। फिर किट्टू सियार को बुलाया।

'तुमने बकरी को तालाब कितने रुपए में बेचा है?'

'सौ रुपए में महाराज!' सियार ने उत्तर दिया।

'फिर तुमने उसके तालाब में बिना पूछे पानी क्यों रखा है?' सिंह सियार से पूछने लगा।

बड़ी धूर्तता से अकड़कर सियार बोला—'मैंने तो इसे केवल तालाब बेचा है, पानी नहीं।' 'फिर तुमने उसके तालाब में बिना पूछे ही पानी क्यों रखा है?' सिंह ने पूछा।

अब उस सियार से कोई उत्तर देते न बना। वह इधर-उधर झाँकने लगा।

शेर को बड़ा गुस्सा आया। वह बोला—'तू दुष्ट है, धोखेबाज है। तालाब का पानी तो श्यामा लेगी ही, पर तुझे जंगल की धारा ४२० के अंतर्गत अपनी धोखाधड़ी के कारण दंड भी भुगतना पड़ेगा। चार महीने तक तुझे बिना वेतन के सारे जंगल की झाड़ू लगाते रहना पड़ेगा।'

राजा की आज्ञा के आगे किट्टू कह भी क्या सकता था?

आखिर उसे पूरे चार महीने तक सारे जंगल की सफाई करनी पड़ी। उसे देखकर जानवर आपस में कहते थे—'जो अधिक चालाक बनता है, उसको अपनी चालाकी का फल मिलता है।



मुद्रक : युग निर्माण योजना प्रेस, मथुरा।